

पर्यावरण PERSPECTIVE

March-April 2021

Issue No- 6

NOT FOR SALE

LET'S WORK FOR MOTHER NATURE

don't forget to visit

कुंभ

16

पर्यावरण संरक्षण का संदेश

आस्था का महापर्व

सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता का पर्व कुंभ

PAGE 17

KUMBH @
HARIDWAR

38

DECLARING NO-PLASTIC ZONE

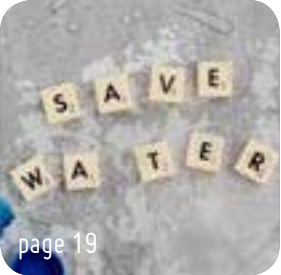
WWW.PARYAVARANPERSPECTIVE.COM



page 06



page 12



page 19



page 16



page 23

इस अंक में

04 संपादकीय: कुंभ और कोरोना

06 “सबको एक साथ चलना है”

07 अंतःकरण से मानें नदियों को मां

12 सृष्टि के संरक्षण से ही बचेगा जीवन

14 जलस्रोतों को प्रदूषण से बचाने का लें संकल्प

16 कुंभ से मिले पर्यावरण संरक्षण का संदेश

17 सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता का पर्व कुंभ

19 जल जीवन मिशन का लोकतंत्रीकरण

21 आइए बनाएं एक पानीदार समाज

23 महिलाएं पानी से भर रहीं बुंदेलखंड की गोद

24 भारत का पहला ‘वर्टिकल फॉरेस्ट अपार्टमेंट’

25 विकास और प्रकृति में सामंजस्य हो

Contents

27 INDIA HAS BEEN WALKING THE TALK

29 AN OBEISANCE TO MOTHER EARTH

30 HOSPITAL FOR TREES

32 PERSONIFYING NATURE

34 LEADING BY EXAMPLE

35 CHILD IS FATHER OF THE MAN

36 PROTECTING MOTHER EARTH

38 DECLARING NO-PLASTIC ZONE

41 BUILDING ROAD FROM WASTES

42 देश का पहला गांव, जहां हर घर में सोलर इंडक्शन पर पकता है खाना

44 गरीब बच्चों का तन ठक रही है 'कतरन'

45 26 की उम्र में लगाए 40 हजार पौधे

46 बगिया वाले बाबा

47 'हर घर की छत पर हो टैरेस गार्डन'

48 नागरिकों का मौलिक अधिकार है 'स्वच्छ जल'



page 29



page 30



page 35



page 36

EDITOR-IN-CHIEF

Rajesh K Rajan

CONSULTING EDITOR

Dr. Atanu Mohapatra

EDITOR (ENGLISH)

Dr. Subhash Kumar

EDITOR (HINDI)

Ankur Vijaivargiya

EDITORIAL TEAM

Lokendra Singh

Dipti Sharma

Niyati Sharma

Kavita Mishra

CREATIVE & GRAPHICS HEAD

Alekhya Sachidananda

Nayak

कुंभ और कोरोना

हम अपने पर्यावरण Perspective के विभिन्न संस्करणों के जरिये पर्यावरण प्रदूषण की गंभीरता और उसके संरक्षण की जरूरत को लेकर चिंताएं व्यक्त करते रहे हैं। बल्कि हम ये कहें की उन चिंताओं की अभिव्यक्ति ही हमारी ई-मैगजीन का सार है, तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS) राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देता रहा है और 2 साल पहले मार्च में ही पर्यावरण के मुद्दे को जन-जन तक ज़ोर-शोर से और पक्के इरादे के साथ पहुंचाने के लिए पर्यावरण संरक्षण गतिविधि (PSG) का गठन किया गया था। पर्यावरण Perspective ई-मैगजीन उसी गतिविधि की देन है।

जन मानस को जागृत करने के लिए, पर्यावरण संरक्षण गतिविधि मानो एकांत में डुबकी लगाने का काम करता रहा हो, पर इस अथक प्रयास का असर साफ दिख रहा है। हम सब 'सतत विकास' और 'जलवायु परिवर्तन' को लेकर पहले से ज्यादा गंभीर हुए हैं और अब देश का हर नागरिक विकास और पर्यावरण संरक्षण, दोनों में सामंजस्य बनाने की बात कर रहा है, जबकि पहले विकास और पर्यावरण के विषय परस्पर एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते थे। निश्चित ही पर्यावरण के प्रति हमारी युवा पीढ़ी पहले से बहुत ज्यादा जागरूक हुई है, जो कि देश के पर्यावरण परिदृश्य के



दृष्टिकोण से एक शुभ संकेत है।

पर्यावरण Perspective कुंभ विशेषांक की सॉफ्ट कॉपी अब तक आपके पास आ चुकी होगी। कुंभ हिन्दू धर्म और आस्था का एक अद्भुत और भव्य पर्व है, जिसमें करोड़ों श्रद्धालुगण इकट्ठा होते हैं और हरिद्वार, प्रयागराज, नासिक और उज्जैन की पवित्र नदियां क्रमशः गंगा, त्रिवेणी संगम, गोदावरी और शिप्रा में डुबकी लगाते हैं। ऐसी मान्यता है कि इन पवित्र नदियों में स्नान करने से मनुष्य का सारा पिछला पाप धुल जाता है और उनकी आत्मा शुद्ध हो जाती है। मेला प्रत्येक तीन वर्षों के बाद हरिद्वार, प्रयाग (इलाहाबाद), उज्जैन और नासिक में बारी-बारी से आयोजित किया जाता है। कुंभ का जिक्र ऋग्वेद, प्राचीन वैदिक ग्रंथों और पौराणिक कथाओं में भी है। इन कथाओं की मानें, तो राक्षसों और देवताओं में जब अमृत के स्वामित्व को लेकर लड़ाई हो रही थी, तब भगवान विष्णु ने मोहिनी का रूप लेकर अमृत को राक्षसों से छीन गरुड़ को सौंप दिया और इस संघर्ष में अमृत की कुछ बूंदें प्रयागराज, नासिक, हरिद्वार और उज्जैन

में छलक कर गिर गई। तब से प्रत्येक 12 साल में इन सभी स्थानों में 'कुंभ मेला' आयोजित होता है।

कुंभ, एक तरफ दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक समागम और दूसरी तरफ इस सदी की सबसे बड़ी त्रासदी और वैश्विक महामारी कोरोना का कहना। ऐसे में उत्तराखंड सरकार द्वारा हरिद्वार कुंभ का सफल आयोजन धर्म संकट से कम नहीं है। यह एक बड़ी चुनौती है, खास कर तब, जबकि हरिद्वार के एक ही आश्रम से 32 लोगों के कोरोना से संक्रमित होने की खबर आई है। COVID-19 वैश्विक महामारी ने कुंभ की भव्यता, पैमाना और विस्तार को कम जरूर किया है, पर उसका ऐश्वर्य, वैभव, गरिमा, भावना और आस्था को निस्तसाह नहीं कर सका।

कोरोना वायरस के प्रसार को रोकने के लिए सामूहिक समारोह के आयोजन पर अंकुश के सरकारी प्रयास के मद्देनजर, **पर्यावरण Perspective** सभी कुंभ तीर्थयात्रियों से आग्रह करता है कि आप सभी कोविड प्रोटोकॉल का पालन करें, हरिद्वार में साफ-सफाई रखें और गृह मंत्रालय द्वारा समय समय पर जारी किये गए निर्देशों का सख्ती से पालन करें। बिगड़ते हालात पर काबू पाने के लिए उत्तराखंड सरकार ने बाहर से आने वाले लोगों के लिए एक नई गाइडलाइन जारी कर दी है, जो 1 अप्रैल से 30 अप्रैल, 2021 तक लागू रहेगी।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' सदियों से हमारी भारतीय संस्कृति का न केवल मार्गदर्शन करता रहा है, बल्कि हमारा लोकाचार बन चुका है। इसी संस्कृति का निर्वहन करते हुए भारत सरकार ने न केवल कोरोना की वैक्सीन को दुनिया भर में वितरित किया, बल्कि वैक्सीन के डिब्बे पर 'सर्वे सन्तु निरामयाः' (सभी सुखी हों, सभी रोगमुक्त रहें) श्लोक को लिख कर भारत की सदियों पुरानी संस्कृति को दोहराया है।

पर्यावरण को संरक्षित रखने के लिए हमारी सरकारें समय समय पर पर्याप्त कानून और सुरक्षा उपायों को भी बनाती रही हैं, लेकिन प्रदूषण पर पूर्ण रूप से कोई लगाम लगती नहीं दिख रही। हमारे पास इस धरती का कोई विकल्प भी नहीं है। ऐसे में इस पृथ्वी को संरक्षित करना हम सब की व्यक्तिगत और सामूहिक जिम्मेवारी है, जो जन-भागीदारी से ही संभव है।

ग्लोबल वार्मिंग के प्रति दुनिया भर में चिंता बढ़ रही है। लेकिन क्या चिंता करना ही मात्र पर्याप्त है? अब वो स्थिति बीत गई कि मात्र जागरूकता से कुछ हो सकता था। अब सवाल यह है कि क्या पर्यावरण संरक्षण के लिए किसी को एक नोबेल पुरस्कार दे देने मात्र से ही ग्लोबल वार्मिंग की समस्या से निपटा जा सकता है? बिल्कुल नहीं। इसके लिए हमें कई प्रयास करने होंगे – जैसे भारत ने पैरिस संधि का पालन किया है, वैसे ही विश्व के अन्य देश भी अपनी जिम्मेदारी को न केवल समझें, बल्कि पैरिस संधि का पूर्णतः पालन भी करें। ऐसा करने से आने वाली शताब्दी में पृथ्वी ज्यादा से ज्यादा 1.5/2 डिग्री तक ही गरम होगी। यह पर्याप्त नहीं है, लेकिन एक महत्वपूर्ण शुरुआत अवश्य है। ग्लोबल वार्मिंग से बचने की यह जिम्मेदारी केवल सरकार की नहीं है। हम सभी भी पेट्रोल, डीजल और बिजली का उपयोग कम करके हानिकारक गैसों के उत्सर्जन को कम कर सकते हैं। महत्वपूर्ण यह भी है कि हम जंगलों की कटाई पर केवल रोक ही न लगाएं, बल्कि अधिक से अधिक पेड़ भी लगाएं। इससे भी ग्लोबल वार्मिंग के असर को कम किया जा सकता है। टेक्निकल डेवलपमेंट से भी इससे निपटा जा सकता है। हम ऐसे रेफ्रीजरेटर्स बनाएं, जिनमें CFCs का इस्तेमाल न होता हो और ऐसे वाहन बनाएं जिनसे कम से कम धुआं निकलता हो।

पर्यावरण Perspective अपने पाठकों, जो की निश्चित ही हमारे पर्यावरण प्रहरी हैं, से गुजारिश करती है कि आइए हम सब कंधे से कंधा मिला कर आगे बढ़ें और आने वाली पीढ़ी के लिए उदाहरण के तौर पर एक अनुकरणीय कदम उठाएँ। जैसे महात्मा गांधी ने

कुंभ, एक तरफ दुनिया का सबसे बड़ा धार्मिक समागम और दूसरी तरफ इस सदी की सबसे बड़ी त्रासदी और वैश्विक महामारी कोरोना

कहा था, "वो बदलाव बन कर दिखाओ, जिसकी उम्मीद तुम दुनिया से रखते हो।" ठीक ही है, जो परिवर्तन हम देखना चाहते हैं, उसका शुभारंभ हम खुद से ही करें।

और हां, यदि आपके पास **पर्यावरण Perspective** को लेकर कोई सुझाव हो तो उन्हें हम तक बेहिचक आने दें। आपकी रचनात्मक आलोचना ही हमारे प्रयास और हमारी ई-पत्रिका को प्रभावी बना सकेगी और हम अपने मकसद 'पर्यावरण प्रदूषण को लेकर जन-जन को महज जागरूक नहीं, बल्कि उद्वेलित करने' में कामयाब हो पाएंगे।

पर्यावरण Perspective के अब तक के संस्करणों में हमारी पूरी संपादकीय टोली ने आप सब के लिए देश के कोने-कोने से खंगाल कर प्रेरणादायी और वास्तविक कहानियों का संकलन किया है। आशा है आप सब हमारे पर्यावरण से जुड़े प्रयासों को गांव-गांव तक ले भी जा रहे हैं और हमारे संकलन का भरपूर आनंद भी उठा रहे हैं।

अंत में बस एक ही आग्रह पुनः दोहराऊंगा, कि **पर्यावरण Perspective** की इस नेक पहल को समाज के अंतिम व्यक्ति तक अवश्य ले जाने में हमारी मदद करें। **पर्यावरण Perspective** अपने पाठकों से पर्यावरण के प्रति सक्रिय रहने और अपने क्षेत्रों में घटित प्रेरणादायी और सफल कहानियों को surabhi.tomar@gmail.com पर साझा करने का आग्रह करती है। हमारे पर्यावरण से जुड़े विभिन्न प्रयासों को जानने के लिए www.paryavaransanrakshan.org पर लॉग-इन करना न भूलें।

(RAJESH K RAJAN)

चिंतन

“सबको एक साथ चलना है”

यदि नदियों के प्रवाह को बार-बार रोकेंगे और हद से ज्यादा नियंत्रण में लाएंगे, तो प्रवाह का क्या होगा

मोहन भागवत

मनुष्य को अपने जीवन के उस तरीके पर लौटना होगा, जिसमें आवश्यकताएं कम हों। आवश्यकता की पूर्ति के लिए हम सृष्टि से जितना लेते हैं, उतना वापिस करते हैं। इस ओर फिर से लौटना पड़ेगा। हमारी दृष्टि बदल गई। हम विनाश के कगार पर आकर खड़े हो गये। अब वहां से हम वापिस जाना चाहते हैं, तो हमको फिर वहीं से प्रारंभ करना होगा, जहां से हम भटक गये। सबको साथ चलना है। क्योंकि एक ठीक नहीं रहेगा, तो बाकी सब बिगड़ जायेगा। सबको मिलजुल कर चलने की प्रेरणा देने वाला, ऐसा विचार सबके मन में उत्पन्न करने वाला, जोड़ने वाला तत्व है उससे सबका संबंध है। ऐसा चिंतन हो। सर्वगुण चैतन्य है। एक दूसरे से जुड़ा है। यह मानकर नीतियां बनाते हैं कि नहीं यह मूल प्रश्न है। ये प्रश्न अब चर्चा में आ रहा है। इसकी स्वीकृति तंत्र के स्तर पर नहीं मिली है।

अभी इसमें दो मत हैं। इसलिये विकासवादी और पर्यावरणवादी दो तंत्र खड़े हो जाते हैं और आपस में लड़ते हैं। नदियों का प्रवाह और भराव दोनों रहें। यदि नदियों के प्रवाह को बार-बार रोकेंगे और हद से ज्यादा अपने नियंत्रण में लाएंगे, तो प्रवाह का क्या होगा? नदी प्रवाहवान नहीं रहेगी तो गंदी होगी। ठहरा पानी गंदा होता है। यह प्रकृति का नियम है। यह एक नदी का प्रश्न है। यह पूरी दुनिया के पीने के जल का प्रश्न है। मनुष्य भी 65 प्रतिशत जल तत्व है। लेकिन जीवन जीने के लिए जो जल चाहिये, जिसके बिना जीवन संभव नहीं है। वह जल कैसा मिले। उस समस्या को हल करना है, इसलिए सबका संस्कार, सबकी शिक्षा इस ढंग से करनी पड़ेगी कि उनको ये दृष्टि मिले कि सब कुछ संबंधित है। सबको साथ लेकर चलना है। सबके अस्तित्व को उन्नत, विकसित करने वाला मेरा जीवन होना चाहिये। ये जीवन दृष्टि उसके संस्कार ऐसे बने हैं तो उपयुक्त नेतृत्व अपने आप सामने आयेंगे। सोच अच्छी होगी तो नीति अच्छी बनेगी।

सौभाग्य की बात है कि हमारी परंपरा के मूल्यों में ये सोच है कि सब कुछ एक ही है। दिखता अलग है, लेकिन है नहीं। इसलिये सबको एक साथ चलना है। अकेले का नहीं सोचना है, सबका सोचना है। एक

जिन मूल्यों के आधार में बात कर रहा हूं उससे नकार नहीं है, स्वीकार है



**जल संरक्षण है मेरा सपना,
ताकि खुशहाल बने भारत अपना।**

**सौभाग्य की बात है कि हमारी परंपरा के मूल्यों में
ये सोच है कि सब कुछ एक ही है। दिखता अलग है,
लेकिन है नहीं। इसलिये सबको एक साथ चलना है।**

नदी बहने के बाद जल भरने वाली नदियां, आसपास के नाले, उस क्षेत्र के जंगल, जन, जमीन, जल, जानवर सहित सारी बातें इन सबका संबंध करना पड़ता है। क्योंकि जीवन सबका है। इसलिये हम सब लोग इस प्रकार एक मूल भूमिका पर चिंतन करें। एकांकीचिंतन नहीं चलेगा।

और बातों का समन्वय है। इस प्रकार की नीति, नियम होने चाहिये। नीति, नियम का सामंजस्य रहा है। इस प्रकार की गंगा भूमि पर लानी है और गंगा सागर तक ले जाकर और अपने भाईयों का अगर पुनर्जीवित करना है, मुक्ति दिलानी है, तो भगीरथ प्रयास करने पड़ेंगे। इस संकल्प के साथ प्रयास करेंगे, विचार करते रहेंगे, सामूहिक प्रयास चलते रहें, अनुभवों का आदान-प्रदान करते रहेंगे तो आवश्यक नीति के क्षेत्र में एक सही और अत्यंत व्यवहारिक बदलाव लाने वाला यह सम्मेलन सिद्ध होगा।

(राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के परम पूज्य सरसंघचालक श्री मोहन भागवत जी द्वारा नदी महोत्सव के दौरान दिये गए वक्तव्य का अंश)

संस्कृति

अंतःकरण से मानें नदियों को मां

हम नदियों के जल को पवित्र क्यों मानते हैं, क्योंकि हमारी मान्यता है

सुरेश जी (भैयाजी) जोशी

नदी भक्तों को प्रणाम करता हूँ। यह महोत्सव हम सबके अंतःकरण में नदियों के प्रति जो श्रद्धा, जो भाव है, उसको संकलित करने का अवसर है, ऐसा मैं मानता हूँ। मैं प्रारंभ में ही कहना चाहूंगा कि मैं इस विषय का बहुत जानकार व्यक्ति नहीं हूँ। इसका गहराई से अध्ययन किए हुए लोग यहां पर उपस्थित हैं। भारत की सभाओं में अध्ययन से भी ज्यादा कर्मशीलता को अग्र रखा गया है। इसलिए नदी विषय को लेकर क्रियाशील से लेकर कर्मयोगी तक यहां बैठे हुए हैं। विषय पर यहां बताया गया कि नदियां संस्कृति हैं, अगर हम सोचें कि अपने भारत वर्ष की कई प्रकार की विशेषताएं हैं। ये दुनिया से अलग प्रकार का देश है। इसकी अलग अपनी पहचान है। विज्ञान युग में कोई शायद इन बातों को महत्व नहीं देता, लेकिन भारत का रहने वाला सामान्य व्यक्ति इन सब विशेषताओं को समझता है, जानता है। समाधान करने की क्षमता नहीं होगी, परंतु आचरण के स्तर पर उन सबको हजारों वर्षों से पालन करता आया है। यही हमारी मान्यता है। जब मान्यताओं का प्रश्न आता है तो मान्यताओं का कभी तर्क नहीं होता। इसे आप क्यों मानते हो। बस हम मानते हैं, इसलिए मानते हैं तो इसको हम समाधान करने की दिशा में ले जाएं। यहां मान्यताएं हैं कि नदियां हमारी मां हैं। अब कोई तर्क मैं जाणूंगा कि क्या नदियों ने आपको जन्म दिया है, उसे मां मानते हो। नदियों की क्या आयु होती है, क्या हमेशा बच्चों को जन्म देती रहती हैं। इस तर्क में जाने का विषय नहीं है। हम मानते हैं कि नदी हमारी मां है। बस इसका और कोई जवाब नहीं है। हमारी श्रद्धा है, श्रद्धा कितनी गहरी होती है। इसे शब्दों से प्रकट नहीं किया जा सकता है।

मैं कई वर्षों से महाराष्ट्र नासिक में रहा। नासिक में गोदावरी नदी है। पर नासिक में रहने वाला सामान्य व्यक्ति जब गोदावरी में स्नान करने के लिए जाता है, तो वो कहता है कि मैं गंगा पर जाकर आता हूँ। स्थान-स्थान पर गंगा कहेगा, यमुना कहेगा, नर्मदा कहेगा और अपने गांव में बहने वाली ऐसी महान

बनी रहती हैं और टीका-टिप्पणी करने से प्रखर बनती है। श्रद्धा विषय ऐसा है। भारत ऐसे श्रद्धा के विषय को लेकर जी रहा है। एक सिनेमा के गीत में आता है। मानो तो गंगा है, नहीं तो पानी है। तो नदियों का पानी, पानी तो है, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन मिलाकर पानी बना है। हम नदियों के जल को पवित्र क्यों मानते हैं, क्योंकि हमारी मान्यता है। जब श्रद्धाएं विकसित हो जाती हैं, तो उसके साथ सामूहिक रूप से इसके प्रति समर्पण का भाव अंतःकरण में जागृत होता है। जो कुछ है, इसके लिए समर्पण है। इसलिए

**“प्रकृति का यह अनमोल उपहार,
जल को इस तरह तुम ना करो बेकार”**

अपने यहां नदियों को केवल जल का प्रवाह नहीं माना। नदियों के किनारे बैठकर साधू संतों ने तपस्याएं कीं। मठ, आश्रम बनाएं। समाज के लिए उपयुक्त चिंतन का वहां पर काम चलता रहा। मार्गदर्शन करते रहे और एक परंपरा इस देश के अंदर फैली कि कुम्भ हो, मेले हों, ऐसे अवसरों पर कोई उचित स्थान नहीं ढूंढा जाता। स्थान वहीं ढूंढा जाता है जहां पर कोई पवित्र नदी है। उस नदी के किनारे पर सिंहस्थ और कुंभ हुआ करते हैं। फिर वो नासिक का हो, उज्जैन का हो, प्रयाग का हो, हरिद्वार का हो, ये सब कुंभ नदी के किनारे ही क्यों होते हैं? उस नदी के पावन सानिध्य में रहकर इस देश की हजारों वर्षों की श्रद्धा, एक परंपरा, एक जीवन-शैली स्वाभाविक रूप से नदियों के दर्शन में सामने आती है। नदियां उस तरह से कहा जाएं तो एक मुख्य साक्षी हैं, हजारों वर्षों के जीवन प्रवाह की। पर मैं उसे मुख्य साक्षी नहीं मानता, देखने के बाद कई प्रकार के प्रश्न मन के अंदर निर्माण होते हैं वो मुख्य साक्षी कैसे हो सकती है।

कल यहां पर नदी के साथ संवाद की बात होगी, दर्शन की बात होगी, चाहे जो गंगा के किनारे जाते हैं वो गंगा मां से संवाद करते हैं गंगा का दर्शन प्रतिकात्मक हो जाता है। लेकिन संवाद क्या हो रहा है? क्योंकि इन प्रवाहों में कई प्रकार के जय-पराजय, कई प्रकार के समूह की संस्कृति उन नदियों के नाम से ही जानी जाती है। अगर सारे विषयों में सिंधु संस्कृति शब्द प्रयोग चला होगा, तो सिंधु संस्कृति कोई नाम नहीं है। सिंधु नदी के



नदियों के प्रतिनिधि के स्वरूप में जाकर स्नान करता है। यह है श्रद्धा, हमारी श्रद्धा को चुनौती देने से श्रद्धाएं समाप्त नहीं होती। श्रद्धाओं पर टीका टिप्पणी करने पर कभी श्रद्धाएं समाप्त नहीं होती। श्रद्धा अंतःकरण में

किनारे रहने वाले लोगों ने जिस प्रकार से अपनी जीवन शैली को विकसित किया, जिस वस्तु के सामने प्रस्तुत किया और जो अपने आप में क्षेत्रता भरी हुई है। दुनिया के किसी भी देश में नदी के नाम से समाज का परिचय नहीं होता। नदी के नाम से तट आए हैं। हम गंगा किनारे से आए हैं। गंगा तट के किनारे रहने वाला व्यक्ति अपने आप को बड़ा भाग्यशाली समझता है। क्योंकि मैं इसके नित्य दर्शन से स्नान से कई प्रकार की ऊर्जा प्राप्त करता हूँ। भारत की कल्पनाएं, भारत की मान्यताएं यहां विज्ञान की कसौटी पर परखने की क्षमता भारत के लोग नहीं समझते और जो समझते हैं वो करें इसका अध्ययन कि श्रद्धा के मूल्य में क्या है? हम तो हजारों वर्षों से इस प्रकार की श्रद्धाओं को लेकर चले हैं और स्वाभाविक रूप से इस किनारे पर रहने के बाद समर्पित करने का भाव अपने आप आ जाता है।

मैं जब नदियों में डुबकी लगाता हूँ तो मैं सोचता हूँ कि मैं कई प्रकार के दोषों को विसर्जित कर रहा हूँ। अपने आप को शुद्ध रखने का इससे बड़ा और कौन-सा मानक हो सकता है। मैं जानता हूँ कि गंगा में, नर्मदा में डुबकी लगाऊंगा तो मेरे मन में जो कुविचारों का संक्रमण है वो नष्ट हो जाएगा। मान्यता है, इसलिए इसके बड़े विचित्र अनुभव हैं। अपने आपको नदी के स्नान से शुद्ध करने जा रहा हूँ, यह एक स्वाभाविक अंतःकरण की भावना है। मैं कई प्रकार की गलतियों को छोड़कर आ रहा हूँ और पवित्रता को लेकर जा रहा हूँ। मैं समझता हूँ कि किसी भी समाज को, देश को, जनसमूह को पवित्र रखने का इससे अच्छा कोई मार्ग नहीं हो सकता, क्योंकि शरीर का मैल तो निकल सकता है पर मन का मैल निकालने के लिए इस प्रकार की श्रद्धा, समर्पण के भाव के बिना संभव नहीं और अपने यहां पर कई प्रकार के दान धर्म और यात्राएं जो सब विकसित हुआ है यह सब नदियों के साथ जुड़कर विकसित हुआ है, इसलिए मैंने कहा कि भारत की कुछ विशेषताएं हैं।

दान, धर्म, तप, तपस्या, त्याग, बलिदान, श्रद्धा, भक्ति ऐसे जीवन में विकसित होता आया है और यह इसका भावनात्मक पक्ष है, भावनात्मक पक्ष को दुर्बलता से बचाने के लिये सभी स्तर पर प्रयास होने की आवश्यकता है। यह किसी प्रकार की चुनौती के सामने भी डटकर खड़ा रहने वाला अगर कोई भाव है तो वह श्रद्धा, भक्ति का भाव है। यह इस प्रकार की अंतःकरण की भावनाओं का पक्ष है, उसे समाप्त करने की कोई बात नहीं कर सकता। श्रद्धाएं समाप्त होती नहीं हैं। अपने भारत की, चिंतन की एक विशेषता है। हम मानते हैं कि सभी में एक चैतन्य व्याप्त है। व्यक्ति जब मानने लगता है कि मैं उस चैतन्य में हूँ जो सबमें व्याप्त है तो उसका स्वभाव ही बदल जाता है उसे पानी में देवता दिखते हैं। मिट्टी में देवता

**हम शुद्ध रखेंगे तो दुनिया शुद्ध रहेगी। अपने हाथ में है।
नदियां ये ही कहती हैं। जब तक तुम ठीक रहोगे तब
तक मैं जल पिलाती रहूंगी।**

देखते हैं, वायु में देवता दिखाई देते हैं। प्राणी, पक्षियों में भी उसी चैतन्य की अनुभूति होती है, इस प्रकार चैतन्य की अनुभूति, जब होती है तो वहां शोषण का भाव नहीं रहेगा। अन्याय, अत्याचार का भाव कहां रहेगा, आक्रमण का भाव कहां रहेगा। भारतीय चिंतन में साधु संतों ने इस संस्कृति को जीवनशैली में परिवर्तित किया है। आक्रमण की भूमिका में यह बहुत बड़ी बात है। आक्रमण और सुरक्षा दोनों में अंतर है। अपने आप का संरक्षण करना ये प्राणी मात्र का अधिकार है। नदियों का जब दर्शन करते हैं तो नदियों का स्वाभाविक रूप से संकेत मिलता है कि दो किनारों के बीच बहना किनारों का उल्लंघन नहीं माना जाता। क्या हमें हमारे जीवन को कोई संकेत नहीं है कि हम अपनी मर्यादाओं का उल्लंघन न करें। अपनी सीमाओं को समझें, क्या नदियों का ये संकेत नहीं है कि हम अपनी मर्यादाओं का उल्लंघन न करें। अपनी सीमाओं को समझें, क्या नदियों का ये संदेश नहीं है कि हम सबके लिए उपलब्ध है। नदी में गंदगी करने वालों को भी वो जल पिलाती है, कोई प्रतिबंध नहीं है। इस प्रकार का भाव है उसके अंदर।



Pics by Ashoo Sharma

मैं समझता हूँ कि इस प्रकार की चैतन्य शक्ति सबके अंदर है। उसका प्रत्यक्ष अनुभव हम नदी के द्वारा ही ले सकते हैं। नदी हमसे कोई भेदभाव नहीं करती। नदी अगर भेदभाव नहीं करती तो इस पृथ्वी पर रहने वाला कोई भी प्राणी जगत भेदभाव न करें। यहीं संस्कृति है अपनी। इससे मिलने वाला यही संकेत है। इसलिए आज सारे देश के, सारे विश्व के सामने कोई संकट है तो संकटों का समाधान इसी बात में है कि हम सब मानें कि हम एक ही चैतन्य शक्ति के अंग हैं। हम सब में एक ही शक्ति व्याप्त है। इस एकमात्र संदेश ने सारे विश्व को शांति के मार्ग पर चलने के लिए बल प्रदान किया है। यही देश की संस्कृति और परंपरा है। अपनी सारी प्रार्थनाओं में इसी प्रकार का वर्णन आता है। किसी भी संत का प्रवचन निकालकर देखिए कि सारे वचनों में एक यही मार्गदर्शन मिलता है कि सभी में चैतन्य व्याप्त है। मिलकर चलो। इसे और कुछ बताने की आवश्यकता नहीं। सर्वे: भवन्तु सुखिनः का उच्चारण, उद्गार इस भाव के कारण हुआ है कि एक ही चैतन्य है। नारा है, बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय। पर हिंदू चिंतन के मुताबिक बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय नहीं सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय है। क्या हमारी बहने वाली नदियां संदेश नहीं दे रही हैं सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय का। इसे अपने जीवन से जुड़ा हुआ मानकर चलने वाला समाज और स्वाभाविक रूप से उसकी दृष्टि उसी प्रकार की रहेगी तो, शोषण का भाव का कभी मन के अंदर निर्माण नहीं होगा, दोहन का भाव ही नहीं रहेगा। प्रकृति ने कहा है कि जो चाहिए वो मिलेगा, जितना चाहिए वो मिलेगा पर मनुष्य का कदम और आगे चला गया कि जितना चाहिए उतना मिलेगा, जितना ले सकता हूँ उतना लूंगा। इसलिए सारी अपनी ले सकने वाली क्षमता को बढ़ाने की दिशा में हमारी सारी शिक्षा और विज्ञान प्रकृति के साथ संघर्ष और विज्ञान प्रकृति के साथ संघर्ष करने के लिए खड़े हो गए। जितना चाहिए वो नहीं जितना ले सकता हूँ उतना लूंगा। मेरी आवश्यकता, मैं तय करने वाले। इसी अहंकार के कारण आज जितने भी प्रश्न निर्मित हुए हैं इसी के कारण हुए हैं। अपने यहां की स्वाभाविक परंपरा है। संतुष्ट रहो, जो मिलता है उसमें आनंदित रहो। दान केवल क्षमताओं पर निर्भर नहीं होता है केवल मन की अवस्था पर निर्भर होता है। दान का मतलब डोनेशन नहीं दान और डोनेशन की भाषा में जमीन आसमान का अंतर होता है। हम दान को डोनेशन के वैकल्पिक शब्द में प्रयोग नहीं करते और समर्पण को सेक्रिफाइज नहीं कह सकते। बहुत अलग-अलग प्रकार से इन शब्दों के पीछे इस समाज का मानस

प्रकट होता है, संस्कृति प्रकट होती है। हमारी जीवन की शैली प्रकट होती है। मानने की आवश्यकता है और इसलिए सब प्रकार से प्रकृति में उपलब्ध सभी बातों में जीवन का अंग है ऐसा मानने वाला हिन्दू चिंतन विश्व को भी सही दिशा में आगे बढ़ने की एक ऊर्जा, प्रेरणा प्रदान कर सकता है। इतनी क्षमता इतनी सामर्थ्य हमारी परंपराओं में, संस्कृति में है। इसलिए हमने सभी को, सामान्य व्यक्ति को समझ में आए इस भाषा में देवताओं को बताया है। और जो देवता है जो मुझे देने वाला है, मुझे मिल रहा है। इसके प्रति कृतज्ञता का भाव होना चाहिए। भक्ति का भाव होना चाहिए यह स्वाभाविक रूप से विकसित हुआ है। जो मुझे मिल रहा है उसके प्रति मेरे मन में, अंतःकरण में कृतज्ञता है पर जब ये बदल जाता है कि तुम मुझे कम दे रहे हो, मुझे ज्यादा चाहिए, जितना चाहिए उतना लूंगा तो कभी-भी कृतज्ञता का भाव बीज में निर्माण होना, मुश्किल है। इसलिए भारत का समाज यहां रहने वाले सामान्य से लेकर बड़े-बड़े तक में प्रगति करने वाले लोग अपने व्यवहार, वाणी से संदेश दे रहे हैं कि हमारे अंतःकरण में प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का भाव हमेशा बना रहना चाहिए। इसके साथ तालमेल करना है। लेन-देन की बात आती है। कभी-कभी चर्चा में चलती है। क्या निर्जीव में भी कुछ प्रदान करने की क्षमता होती है। वृक्ष निर्जीव नहीं है। पर सामान्य व्यक्ति इसे निर्जीव मानता है। इस जमीन पर मिट्टी के अंदर भी चैतन्य है पर उसको भी निर्जीव माना जाता है। अगर निर्जीव होती तो फसल कहां से आती। सजीव है इसलिए फसल आती है। सजीव है इसलिए फसल उत्पन्न होती है। विज्ञान इसे मानने के लिए तुरंत तैयार नहीं और इन सारों को निर्जीव माना जाता है। उनके अंदर विचारों को शक्ति देने की क्षमता रहती है, इसको समझने की आवश्यकता है। हिमालय की ऊंचाई और वैष्णो देवी की ऊंचाई में शायद ज्यादा अंतर नहीं होगा। पर वैष्णो देवी, मानसरोवर और कुल्लू मनाली जाने वाले व्यक्ति के अंदर मन में विचार भिन्न प्रकार के हैं। कौन कहता है कि निर्जीव वस्तुओं में संस्कारों की क्षमता नहीं है।

अगर विज्ञान की परिभाषा में कहें तो जलवायु, कठिनाईयां एक जैसी हैं परंतु मन में उठने वाले विचार भिन्न क्यों है? यही इसकी क्षमता है, शक्ति है, जो हमें सब प्रकार की प्रेरणा प्रदान करती है। इसलिए भारत चिंतन में ऐसे सभी निर्जीव लगते होंगे, इसलिए पत्थरों में देवता देखे जाते हैं। पत्थर तो वही है पर उस मूर्तिकार के मन के अंदर जो संस्कार है उसका प्रकटीकरण पत्थरों में से मूर्ति में निकलता है और पत्थरों के द्वारा निर्मित मूर्ति में अनेक के जीवन में परिवर्तन लाने की क्षमता आ जाती है। इसलिए ये मानना है कि निर्जीव वस्तु में संस्कार देने की और कुल चैतन्य देने की क्षमता नहीं है। ये गलत है। विज्ञान

की प्रयोगशाला में सिद्ध करना मुश्किल है परंतु हम व्यक्ति के जीवन में, नित्य अपने जीवन में अनुभव करते आए हैं कि संक्रमण सानिध्य में प्राप्त होता है। इसलिए मैंने कहा चैतन्य है। इसलिए सारे प्रतीकों को अपने जीवन में स्थान है। पूज्य चिदानंद जी ने अपने उद्बोधन में कहा था कि और कहीं नदियों को माता मानने की कल्पना नहीं की जा सकती। दुनिया में कहीं नहीं। हम मकान बनाते हैं तो भूमि पूजन क्यों करते हैं, भूमि को हमने देवता माना है कि हम इस पर मकान बनाने जा रहे हैं। हमारी सुविधा के लिए बनाने जा रहे हैं। आप क्षमता मांगते हुए उसकी पूजा करते हुए मकान बनाने की शुरुआत करते हैं। साइंटिफिक रीजन क्या है? कहना मुश्किल है। आयुर्वेद में कहा है कि वैद्य लोग जब दवाईयां बनाने के लिए वनस्पतियां तोड़ने जाते थे तो परंपरा ऐसी थी कि उनकी पूजा करते थे। जो दवाईयां, औषधियों के लिए वनस्पतियां आवश्यक है, उसकी पूजा करने के बाद क्षमा मांगते हुए कि मैं मेरे स्वार्थ के लिए नहीं सामान्यजनों की रक्षा करने के लिए तुम्हारा उपयोग करना चाहता हूं, क्षमा करें, ये परंपरा थी। ऐसे सारे जीवन को हम देखेंगे तो इस प्रकार का कृतज्ञता का भाव को बनाये रखने के लिए आवश्यक हैं। सभी को वैज्ञानिक तर्क देने की क्षमता नहीं रहेगी। कुछ लोग बनेंगे, कुछ लोग उसका अध्यापन करेंगे, कुछ लोग तर्क के द्वारा समझाएंगे। देवता मानते ही व्यवहार शैली परिवर्तन आ जाता है। जिस दिन इस देश का किसान यह समझने लागेगा कि गाय हमारी मां है, उस दिन के बाद वो उसे बेचने के लिए बाजार में नहीं ले जाएगा। यदि ये भावना क्षीण हो गई कि पशु जबतक हमारे लिए कुछ दे रहा है तब तक उपयोगी है। इस प्रकार का भाव जब उत्पन्न हो जाता है तो स्वाभाविक रूप से वह उसे बाजार में बेचने के लिए खड़ा हो जाता है। जो यह कहेगा कि गाय मेरी मां है तो उसके अंदर बेचने की भावना उत्पन्न नहीं होगी। कई प्रकार की बातें अपने यहां चलती आयी है। बड़ा आश्चर्य भी लगता है।



Pics by Ashoo Sharma



कभी-कभी हम सबके जीवन का उत्थान और पतन, ये सब अगर सृष्टि जगत से जुड़ा हुआ है तो हम लोग यहां कहते आए हैं कि प्राणी जगत भी हमारे जीवन का अंग है, और ये प्राणियों के प्रति सद्भावना है और उसके प्रतीक के रूप में गऊ माना आगे चलकर कहा गया कामधेनु। मुझे मालूम नहीं कि कामधेनु नस्ल की गाय कहां मिलती है। किसी को पता हो तो जरूर बताइये। कामधेनु कोई नस्ल नहीं है तो कामधेनु जब हमने कहा तो हमारी कामनाये पूरी होती है तो हमने प्रतीक के रूप में उसे कामधेनु कहा। हमारे जीवन का संबंध वनस्पति जगत से आता है। आज भी अभी तक मुझे कोई ध्यान में नहीं आया कि कोई रिसर्च हुआ है, शोध हुआ है कि अन्न धान की आवश्यकता नहीं रहेगी। शायद नहीं होगा। फलों की आवश्यकता नहीं रहेगी। शायद नहीं होगा। फलों की आवश्यकता नहीं रहेगी। न गेहूँ चावल, दाल, आम, अमरूद आदि फैक्ट्री में निर्माण होंगे। ये संभव ही नहीं। ये तो पेड़-पौधों में ही होंगे। ये तो हमारे जीवन की रक्षा के लिए जीवन के उपयोग में आनंद के लिए, जीवन के पोषण के लिए वनस्पति जगत के प्रतिनिधि के रूप में एक कल्प वृक्ष है। जैसे कामधेनु की नस्ल उपलब्ध नहीं है, वैसे कल्पवृक्ष और कामधेनु की कल्पना करते हुए सामान्य व्यक्ति के अंतःकरण में भाव जगाने का प्रयास किया कि वनस्पति जगत तुम्हारी कामनायें पूर्ण करेगा और प्राणी जगत भी तुम्हारी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगा। इसलिए इसका परस्पर अपने जीवन से संबंध है। कामधेनु और कल्पवृक्ष की कल्पनाओं के आधार पर हजारों वर्षों से ये सारी बातें ऋषि, मुनियों, संतों विद्वानों के द्वारा रखी गई। मैं समझता हूँ कि इसका कौन सी प्रयोगशाला परीक्षण करेगी। कौन-सी विज्ञान प्रयोगशाला में ये सिद्ध करने की आवश्यकता है कि ये कल्पवृक्ष, ये कामधेनु है। नहीं ये हमारा विश्वास है, हमारी श्रद्धा है।

हमारे मन के इस भाव को लेकर एक कृतज्ञता का भाव स्वाभाविक रूप से बल पकड़ता है। इसलिए अपने जीवन का संबंध प्रकृति से है। वायु देवता क्यों माना हमने? कोई मूर्ति नहीं है वायु। वायु प्रतीक करके हनुमान जी को खड़ा कर दिया हमने। हम लोग बहुत कुशल हैं इन सब बातों में। सामान्य व्यक्ति निर्माण निराकार की पूजानहीं कर सकता उसे सगुण साकार चाहिए तो कहा कि वायु पुत्र हनुमान बस उसकी पूजा करो। तो सारा वायु तभी शुद्ध रहेगा, जब हम इस वायु को भी देवता मानेंगे। वायु प्रदूषित करने का अधिकार या विचार उत्पन्न नहीं होगा तो प्रश्न क्यों निर्माण होगा। इसलिए ये सारे एक प्राणी जगत से जुड़े हुए इन सारे विषयों का हम विचार करते हैं तो स्वाभाविक रूप से अपनी संस्कृति की एक विशेष मूल्यवान देन सारे विश्व के सामने है, इस प्रकार का भाव ही सारे प्रश्नों का उत्तर दे सकता है। अपनी संस्कृति को दो तीन बातें और है। परम्परावलंबन अपने जीवन का भारतीय संस्कृति में बताया गया एक जीवन का सूत्र है। आप सोच लीजिए अपने व्यक्तिगत जीवन के बारे में भी हम सोच लेंगे। कोई भी प्राणी

स्वावलंबी नहीं है। शत-प्रतिशत नहीं है। स्वावलंबी बन भी नहीं सकता है। उसकी क्रय शक्ति की क्षमता में वृद्धि होने पर स्वावलंबी होना ये बहुत निम्न स्तर का विचार है। हां मेरी आर्थिक क्षमता जो चाहूँ खरीद सकता हूँ। इसका मतलब ये नहीं कि स्वावलंबी हो गए। अगर जिस दिन किसान अपने खेतों में गेहूँ की फसल निर्माण करना बंद कर देगा। तब क्या होगा? इसलिए किसान की मेहनत व परिश्रम पर हमारा जीवन निर्भर है। लेकिन जब देखने की दृष्टि ही बदल गई तो किसानों को कोई महत्व नहीं देगा। किसान क्या होता है, वो तो अनपढ़, गंवार है। उस अनपढ़ गंवार के परिश्रम पर ही कम लोग सुखी हैं। ये समाज कभी इन बातों को समझेगा कि नहीं, जब विकृति आ जाती है तो सभी स्तर पर आ जाती है। किसान गांव में भी अनुभव करता है कि चार बेटे हैं तो जो बुद्धिमान है उसे इंजीनियर बनाएंगे, जो और कुशल है उसे वकील बनाएंगे, थोड़ा कुछ है तो उसको और कुछ शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजेंगे और जो चैथा है वो कुछ नहीं है तो उसे खेती करने को कहेंगे। कृषि का अपना महत्व है। वो दुर्बलों का काम नहीं है। समझदारी का काम है। ये माना जाता है और इसलिए परम्परावलंबन का सिद्धान्त है कि हम कभी न कभी, किसी न किसी वस्तुओं के उपयोग के लिए दूसरों पर निर्भर रहते आए हैं। हम कपड़ा नहीं बनाते, बिजली का निर्माण नहीं करते। पढ़ लिखकर नौकरी करते हैं, उससे होने वाली आय से वस्तु खरीदकर लाते हैं। क्या निर्माण करने वाला कम महत्व का है। इस परम्परावलंबन के सूत्र को अगर समाज अपने अंतःकरण में उसी भावना के साथ रखेगा तो ये परम्परावलंबन परस्पर सम्मान की भावना को बढ़ाता जाएगा और परस्पर सम्मान की भावना को बढ़ाता जाएगा और परस्पर सम्मान की भावना हमारे यहां कई प्रकार के शब्दों के वर्णन से की गई। जिनको हम नहीं जानते। जो अचानक आते उनको अतिथि कहा, अतिथि को भी देव माना है। घर के दरवाजे पर आए व्यक्ति देवता के रूपमें मानकर उसकी सारी चिंता की। दूसरों की चिंता करने वालों को, करने वाले विषयों के लिए धर्म शब्द का प्रयोग किया गया। इसलिए कई बातें इसी प्रकार से हमारे रक्त में उतरी हुई हैं।

वास्तव में कभी-कभी धर्मशाला शब्द का प्रयोग मन में आता है। दुनिया में अगर भारत के अंदर धर्मशाला शब्द का प्रयोग चलता होगा तो मैंने आज तक कोई व्यक्ति नहीं देखा जिसने अपने लिए मकान बनाया है और उसको धर्मशाला नाम दिया हो। अपने माता-पिता की स्मृति को लेकर अपने घर को मकान को कोई भी धर्मशाला नहीं कहता। पर अपने पैसों से दूसरों के लिए, समाज के लिए बनाया उसे धर्मशाला कहा गया। लोकार्पण शब्द की परिकल्पना चली। लोकार्पण करते हैं मेरा नहीं रहा जनता का। धर्मशालाओं में कौन-सा पूजा पाठ होता है। धर्मशालाओं में पूजा पाठ नहीं होता परंतु अच्छे काम और दूसरों के लिए इस प्रकार के काम मुझे करना है तो उसको धर्म का नाम देते हुए अंतःकरण को एक दिशा देने का प्रयास किया। ये करना, ये धर्म है। इसमें तुम्हारा स्वयं का अधिकार कुछ नहीं रहा। तुम्हारा कर्तव्य था वो कर्तव्य तुमने पूरा कर दिया। एक सांस्कृतिक, सामाजिक जीवन में इससे बड़ा, श्रेय मूल्य और क्या हो सकता है। धर्मोदय चिकित्सालय होते हैं। रास्तों पर धर्मकांटा रहता है। धर्मकांटा क्या होता है। वहां पूजा पाठ तो होता नहीं। तो यहां पर प्रामाणिकता है। यहां पर

शुद्धता, यहां पर निस्वार्थ का भाव है। यहां पर दूसरों के लिए समर्पण है। उसको धर्म के आधार पर यहां बताया गया और यहां के जनसामान्य को समझ में आया ये धर्म का काम हैं इसमें गड़बड़ मत करो बाकी जीवन में कुछ भी करते रहो। क्योंकि ये धर्म का स्थान है, ये समाज का है। किस प्रकार की परम्पराओं में जनसमूह को ठीक रखने का प्रयास हजारों वर्षों से महान मुनियों ने, महान ऋषियों ने, विचारकों ने किया है। मैं समझता हूं ये सारी बातें सबको एक तरह से स्वच्छ रखने के लिए है। इसको संस्कृति कहा गया है। परस्परवलंबन का सूत्र जब क्षीण हो जाता है तब सब प्रकार की समस्याएँ, प्रतिस्पर्धाएं और सब प्रकार की विकृतियों सामूहिक रूप से जन्म लेती है। परस्परवलंबन के सूत्र, मूल्य जीवन का मूल्य संस्कृति अपनी परम्परा है, इसका महत्व है, उस महत्व को जीने वाला सामान्य समाज बनता जाए, बड़ा होता जाए। इसलिए नहीं की संस्कृति कहते समय ये भी भाव नदियों के दर्शन से बनता जाए।

हम शुद्ध रखेंगे तो दुनिया शुद्ध रहेगी। अपने हाथ में है। नदियां ये ही कहती हैं। जब तक तुम ठीक रहोगे तब तक मैं जल पिलाती रहूंगी। परस्परवलंबन के सूत्र से कहीं दुर्बलता आती हो, क्षीणता आती हो तो उस दुर्बलता को समाप्त करने का संकल्प लेकर कुछ करने की आवश्यकता है। जीवन का एक सूत्र और है। हमारे यहां कहा गया कि एक मंडलाकर रचना है। जिसका निर्माण होता है वो नष्ट होता है। निर्माण होना और नष्ट होना ये निरंतर चलने वाली प्रकृति की प्रक्रिया है। ऐसे हजारों प्रकार के एक चक्र इस दुनिया में चल रहे हैं। अपने यहां सिद्धान्त के रूप में कहा गया जो भी जीव, जो भी प्राणी, पृथ्वी पर आता है उसका अपना कर्तव्य है। उस कर्तव्य को पूरा करके वो चला जाता है। कितनी भी अच्छी चीज हो उसके टिकने की एक मर्यादा है। उसके बाद नहीं है। जन्म लेने वाला व्यक्ति अपनी मृत्यु का पत्र साथ में लेकर आता है। मरना है कभी न कभी। वह जानता नहीं है अपने मरने की तिथि इसलिए अहंकार से जीता है। जिस दिन उसको पता चल जाएगा कि उसकी मृत्यु कब है, फिर उसका जीवन कैसा रहेगा, कहना मुश्किल है। सब अहंकार, सब बातें समाप्त हो जाएंगी। परन्तु फिर भी व्यक्ति उस अल्पकाल में भी कई प्रकार की विकृतियों को लेकर चलता है। इसमें सोच, समझ विकसित करने की आवश्यकता है। निर्माण हुआ है तो नष्ट होना स्वाभाविक है। प्रकृति में निर्माण हुआ है तो नष्ट होना स्वाभाविक है।

प्रकृति में निर्माण हुआ है तो नष्ट होना स्वाभाविक है। प्रकृति में निर्माण और नष्ट होने की प्रक्रिया निरंतर चलती है। पेड़ हरे भरे होते हैं, पतझड़ का मौसम आता है। फिर पत्ते आते हैं। जब पतझड़ होगा पत्ते जमीन पर गिरेंगे, उससे खाद बनेगा, वहीं पत्ते वृक्ष का पोषण करते रहेंगे। मनुष्य ने उस पर अपनी शक्ति का आक्रमण किया तो अलग बात है। मनुष्य अपने आप को श्रेष्ठ मानता है। बुद्धिमान, सर्वश्रेष्ठ मानता है। इस प्रमुख और अहंकार की भावना के चलते ही आप हमने कई प्रकार की चुनौतियां खड़ी की है। इस अहंकार के चलते दोहन के नाम पर शोषण की प्रवृत्ति बढ़ती गई क्योंकि इसके विकल्प हमारे पास हैं। इस तरह के विचार आ गए तो मनुष्य प्रकृति के साथ संघर्ष करने के लिए खड़ा हुआ है। इसलिए अहंकार से मुक्त श्रद्धा से मुक्त देवताओं की भावनाओं को हृदय भरा हुआ और पूजा की भावना से इसकी शुद्धता बनी रहने की आवश्यकता रहती है। इन्हीं परंपराओं के आधार पर आज तक जीवन चलता आया है। इसलिए परंपराओं को समझने की आवश्यकता है। समझाने की क्षमता भी बढ़नी चाहिए। इस क्षेत्र में कार्य करने वालों को नदियों की पूजा क्यों करनी है। ये समझाने की आवश्यकता है। पेड़ों की पूजा क्यों करना है? ये समझाने की आवश्यकता है इसको केवल कर्मकाण्ड न समझते हुए अपने अंतःकरण को शुद्ध रखने का ये एक साधन है। कई प्रकार की विकृतियों से बचा जा सकता है। नदियों का दर्शन करते हैं। हजारों वर्षों से निरंतर चली आयी श्रेष्ठ बातों का स्मरण होता है। जीवन प्रवाहित है चलता रहता है। जिसका कोई संदेश अगर देता है तो बहती हुई नदियां दे रही हैं। जीवन को स्थिर क्यों कर रहे हों।

नदियों की निर्मलता, अविरलता को अंतःकरण में धारण करें। नदियां हमें सिखाती हैं। इसकी गहराई, कल-कल की आवाज कई प्रकार की भावनाओं को जागृत करती है। पर देखने की दृष्टि और सुनने के लिए कान चाहिए। इसका अस्तित्व ही जीवंतता का प्रतीक है। इस प्रकार का भाव, नदी पर कार्य करने वालों के मन में रहे और अपने साथ जुड़ने वाले सामान्यजनों के अंतःकरण में भी संक्रमित करने में सफल रहे तो मैं समझता हूं कि बहुत बड़ा काम होगा। आज हमको चयन करना है कि इस प्रकार के अहंकार से निर्माण होने वाले और परिणामस्वरूप परिस्थितियां जो निर्माण होंगी तो हमें उस पाप का भागीदार बनना है। इस निरंतर सांस्कृतिक प्रवाहों को जो हजारों वर्षों से कर्मकाण्डों के द्वारा, जीवन की शैलियों के द्वारा चलता आया उसे निरंतर चलने वाले प्रवाह को उनमें भाव बना रहे। इस प्रकार के पुण्य के मार्ग पर चलना है। यह हमें सुनिश्चित करना है कि हम पाप के भागीदार बनें कि पुण्य के। मैं समझता हूं कि यह नदी महोत्सव यही संदेश देने के लिए है। इसी संदेश को लेकर ही हम अपने-अपने क्षेत्रों में सफलतापूर्वक कार्य कर सकें। इस प्रकार की शक्ति प्राप्त हो।

(नदी महोत्सव में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्कालीन माननीय सरकार्यावाह श्री सुरेश जी (भैयाजी) जोशी द्वारा दिए गए वक्तव्य का अंश)



Pics by Ashoo Sharma

नदी महोत्सव

सृष्टि के संरक्षण से ही बचेगा जीवन

यह केवल सहायक नदियां ही नहीं, गांव-गांव में फैली हुई जलधाराओं की दुनिया है

सुरेश जी सोनी

इस सत्र का जो विषय है, इसकी आधारभूत विवेचना स्वामी जी ने की। वर्तमान समय में उत्पन्न समस्याओं के निराकरण के लिए चिंतन के स्तर पर, तकनीकी स्तर पर, प्रयोगों के स्तर पर और कैसे क्रियान्वयन हो, इन सबका जो एक व्यवहारिक विवेचन आदरणीय नितिन जी ने कर दिया है। इसके बाद कहने को कुछ नहीं रहता है।

पंचम नदी महोत्सव के केंद्र बिंदु का विषय रखा है सहायक नदियां। यह केवल सहायक नदियां ही नहीं, उस नदियों के बीच के गांव-गांव में फैली हुई जलधाराओं की दुनिया है, जो एक मौलिक विषय है। जिसके कारण समस्या केवल जल की नहीं है, जंगल की नहीं, इससे आगे बढ़कर हवा, पृथ्वी की है और भारतीय चिंतन। जिसकी विवेचना स्वामीजी ने की।

“सौभाग्य की बात है कि हमारी परंपरा के मूल्यों में ये सोच है कि सब कुछ एक ही है। दिखता अलग है, लेकिन है नहीं। इसलिये सबको एक साथ चलना है।”

उसके मूल मौलिक का जब तक हम परिवर्तन नहीं करेंगे, तब तक हम कितने ही उपाये करें, समस्याएं दिनों दिन बढ़ती चली जाएंगी। इसको रेखांकित करते हुए एक बहुत प्रसिद्ध वार्तालाप पश्चिम में हुआ था। उसका निष्कर्ष एक पुस्तक में छपा है। इसकी विवेचना करते हुए लेखक ने कहा था कि इसकी जड़ के अंदर सामाजिक दार्शनिक दृष्टि है और वह क्या है, तो उसने उस दर्शन में कहा कि दुनिया उत्पन्न कैसे हुई कि 5 दिनों में उन्होंने उजाले को, अंधेरे को, पृथ्वी को, समुद्र को, जंगलों को, सबको बनाया और छठे दिन उन्होंने पुरुष और स्त्री को बनाया। उन्हें बनाने के बाद भगवान ने कहा कि यह सुंदर दुनिया बनाई है, वह तेरे भोग के लिए है। तब मैंने कहा उसी दिन से गड़बड़ चालू हो गई। मनुष्य धरती का हिस्सा था, एक अंग था, इसमें जो कुछ है वह सब कुछ तेरा है और उसी कारण से संपूर्ण विश्व के अंदर सभी प्रकार की और पर्यावरण से लेकर हर प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। तो उन्होंने पूछा, यह तो चिंतन 2000 साल से है। आज से तो नहीं। पिछले डेढ़ दशक में साइंस और टेक्नोलॉजी ने ताकत उसके हाथ में दे दी है। मशीन के सहारे जो कुछ है, सब कुछ सोचने लग गया और इसी परिणाम है कि आज पर्यावरण के जो आंकड़े रखे जाते हैं, कितने वर्षों में कितने जंगल कम हो गए, कितनी ओजोन परत का क्षरण हो गया, कितनी प्रजातियों को विलुप्त हो गई। जब तक इसको बदलेंगे नहीं संकट बना रहेगा। पृथ्वी में ऐसा लगता है कि समस्या और गहरी हो गई है।

यहां पर भारतीय चिंतन हमारे सामने आता है कि जिस इंसान ने हमको कहा पृथ्वी एक आत्मा है। मानव

जीवन आकाश, वायु, अग्नि, जल, और पृथ्वी पंचतत्व से जुड़ा हुआ है। इसलिए संवर्धन और संरक्षण का विचार करते समय पंचतत्वों का विचार करना और उसके साथ जीना आवश्यक है। अगर जीना है तो पंचतत्वों से बनी इस प्रकार की दुनिया में जीना है। दुनिया अस्तित्व रहे, इसका विचार करें। एक दुनिया वनस्पति की है, एक दुनिया पशु-पक्षी और प्राणियों की है, एक दुनिया मनुष्य की है तथा एक दुनिया जिसको हम पहाड़, नदी, झरने, हवा, पानी के रूप में देखते हैं, उसकी है। ये चारों दुनिया एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं।

दुर्भाग्य से सभ्यता के विकास के साथ-साथ बड़े-बड़े शहरों में मानव को छोड़कर बाकी सारी दुनिया गायब हो रही है। प्राणी की दुनिया और वनस्पति की दुनिया घर के ड्राइंग रूम तक सिमट गई है। जीवनशैली के अंदर इन सभी शक्तियों का इसके संदर्भ में अगर हम विचार नहीं करेंगे, कोई उपाय नहीं होंगे तो उन समस्याओं का कोई समाधान नहीं होगा। इसके संदर्भ में भारतीय जीवन के प्रति व्यवहार में, सृष्टि के संरक्षण के लिए



चिंतन करने की आवश्यकता है। इसी के साथ-साथ नदी महोत्सव में जो मुख्य विषय हैं, उन पर चिंतन करने की आवश्यकता है।

ऐसा कहा जाता है कि समस्या जल की नहीं है, जल के नियोजन की है। अब जल का नियोजन सरकारी नीतियों के आधार पर, विभिन्न प्रकार की स्कीम के आधार पर इस प्रकार हो। इससे भी आगे चलकर हमको इस नियोजन पर विचार करना है कि समाज को जल का संरक्षण-संवर्धन कैसे करें।

अनुपम मिश्र जी ने अपनी किताब में लिखा है कि जगह-जगह तालाब सूख गए। धीरे-धीरे खत्म हो गए और उन पर बिल्डिंग खड़ी हो गई। तालाब क्यों समाप्त हो गए। एक शब्द उपयोग करते हैं कि तालाब की मिट्टी जमा हो गई। गाद जमा हो गई। अनुपम जी कहते थे कि तालाब में गाद जमा नहीं हुई, एक सफेदपोश आदमी के दिमाग में गाद जमा हो गई। पहले आदमी को अपने दिमाग में जमा-गाद को हटाना है। पहले आदमी वर्षा आने के पहले तालाब में जमा गाद को हटाता था। उसने वह काम बंद कर दिया। इसलिए तालाब समाप्त हो गए।

अब उन्होंने 'राजस्थान की रजत बूंदें' पुस्तक लिखी, तो उसके अंदर उन्होंने कहा कि विश्व में सबसे कम वर्षा जैसलमेर डेजर्ट में होती है। जहां सदियों तक अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मंडी लगती थी। 700 साल पहले तालाब बनाया। 3 मील लंबा और 1 मील चौड़ा और 120 मील का एरिया। नितिन जी जल नियोजन के बारे में बता रहे थे, जल इकट्ठा होकर तालाब में भर जाएगा, ओवरफ्लो होगा, इससे फिर दूसरा तालाब, फिर तीसरा तालाब, ऐसे एक के बाद एक 9 तालाब तक वह अतिरिक्त पानी जाएगा और उससे भी अतिरिक्त छोटी-छोटी नालियों के रूप में रहेगा। समाज ने जल जहां जमीन का स्पर्श करता है वहां से लेकर जहां-जहां तक रहता है, वहां तक उसका नियोजन करना सीखा। उस समाज ने पानी के साथ जीना सीखा। मुझे लगता है कि संपूर्ण समाज में अपने-अपने गांव, अपने-अपने मोहल्ले, अपनी-अपनी बस्ती उसके अंदर पानी साथ कैसे जीना है, कैसे संरक्षण करना है इस प्रक्रिया के संबंध में मानस बने।

आज की तकनीक जो है, इन तकनीकों का उपयोग करके हमने नई प्रवृत्ति को जन्म दे दिया। यह प्रवृत्ति चली, जो धीरे-धीरे नदियां नालों में बदली, नाले मैदानों में परिवर्तित हो गए। इस प्रवृत्ति को फिर बदल सकते हैं, नदियों को फिर नया जीवन दे सकते हैं। मुझे लगता है कि आंदोलन के माध्यम से, इस कार्यक्रम के माध्यम से, गांव-गांव की जो नदियां हैं, वह पुनर्जीवन प्राप्त करें, उस दिशा के अंदर एक विचार करने की आवश्यकता है। इन चीजों का विचार करते समय आज के समय में इन सारी चीजों के ऊपर एक विकट संकट विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों के रूप में आ रहा है। वह वेस्टेज कचरे के रूप बना दिया है।

सभ्यता के विकास के साथ-साथ बड़े-बड़े शहरों में मानव को छोड़कर बाकी सारी दुनिया गायब हो रही है। प्राणी की दुनिया और वनस्पति की दुनिया घर के ड्राइंग रूम तक सिमट गई है।

आधुनिक संसाधनों से, आधुनिक तरीकों से जल प्रदूषित कर सकते हैं, इस दिशा के अंदर चिंतन करने की आवश्यकता है। कहते हैं हजारों भाषणों से ज्यादा एक जीता जागता उदाहरण प्रेरणा देता है। नर्मदा को निर्मल, अविरल, शुद्ध करने की दृष्टि से एक बहुत बड़ी यात्रा मध्यप्रदेश में हुई। हम उससे संकल्पित हुए हैं। नदी के किनारे वृक्षों को लगाने की बात हुई है, नदी के अंदर किसी प्रकार से प्रदूषण न आए इस संदर्भ में विचार करते हुए मुझे लगता है कि एक जीता जागता उदाहरण आने वाले समय में प्रस्तुत कर सकते हैं। वह इस जीवन को दिशा देगा, क्योंकि कहते हैं कि जल ही जीवन है।

पंचतत्व से हमारा जीवन चल रहा है। यहां विभिन्न क्षेत्रों में काम करने वाले लोग और सामान्य जन संपूर्ण चिंतन के साथ उपस्थित हैं। यह चिंतन किसी एक संस्था, सरकार का न होकर हर परिवार का, हर व्यक्ति



का रहेगा और विकास की दृष्टि से अपना योगदान करेगा, तब एक समग्र विकास की कल्पना चलेगी। आजकल बात चल रही है कि मनुष्य और पशुओं की बीच असंतुलन हो रहा है। कई बार पशुधन का विचार करते समय मानसिक दृष्टि से विचार करते हैं कि पशु होंगे तो अतिरिक्त आय होगी। मुझे लगता है इससे भी कुछ आगे बढ़कर आज गांव-गांव में इसका विचार करने की आवश्यकता है। पशु नहीं है, इससे भी आगे बढ़कर जो जमीन है उस जमीन की जिंदगी का संबंध पशु के साथ है। घर में जब माता गर्भवती होती है और बच्चे को जन्म देती है, जो शक्ति का क्षरण होता है, तो फिर से उसको हम पशुओं से उत्पन्न आहार देते थे।

विश्व के अंदर अमेरिका जैसे प्रगतिशील देशों में लाखों हेक्टेयर जमीन बंजर हो गई, क्यों? वैज्ञानिक एग्रीकल्चर के नाम पर प्रयोग होते गए, लेकिन 50 साल में जमीन के अंदर उपज देने की क्षमता खत्म हो गई। बंजर हो गई। भारत के अंदर जमीन 10 हजार साल से फसल देने में सक्षम रही। जमीन के जीवन संतुलन के लिए वृक्षों के संदर्भ में, पशुओं के संदर्भ में, धरती के संदर्भ में, जल के संदर्भ में इस मौलिकवाद का विचार करते समय आज के समय संतुलन को बिठाने के लिए मैं क्या कर सकता हूं, यह सोच कायम है। हमारा चिंतन तो ग्लोबल है।

तीसरा महत्वपूर्ण विषय रिस्पांस पर्सनली, मेरा क्या रोल है। इस पर विचार करें। इस दो दिन के विचार मंथन में दार्शनिक दृष्टिकोण, मनोविज्ञान की हमारी वृत्ति, हमारे व्यवहार के संदर्भ में हमारी दृष्टि और तकनीकी का उस नाते से उपयोग करते समय समग्र संतुलन को हम आप आगे बढ़ा सकते हैं। इस दिशा में पंचम नदी महोत्सव दिशा दे और मध्यप्रदेश इस विषय के अंदर एक जीता जागता उदाहरण में परिवर्तित हो। उस दिशा में शासन-प्रशासन, समाज, समाजसेवी संस्थाएं सभी लोग साकार करें।

श्री अनिल दवे जी चिंतन करते थे। मुझसे चर्चा भी करते थे और अपनी वसीयत में भी उन्होंने लिखा है। अगर यह होगा तो एक दृष्टि से जो अधूरे सपने उन्होंने देखे, वे सपने भी साकार होंगे, सब बंधु इस पर विचार करें। यह नदी महोत्सव इस विषय के अंदर सार्थक बने।

(नदी महोत्सव के दौरान राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के माननीय सह सरकार्यवाह श्री सुरेश जी सोनी द्वारा दिये गए वक्तव्य का अंश)

जल संरक्षण

जलस्रोतों को प्रदूषण से बचाने का संकल्प

कुंभ का शाब्दिक अर्थ है-घट अथवा घड़ा

रामेश्वरी पटेल

विभिन्न तीज-त्योहारों, पर्वों और मेलों ने सच्चे अर्थों में हमारी संस्कृति का अस्तित्व बनाए रखने में सहायता की है। भारतीय पर्वों में 'कुम्भ' को पूरे भारत की विभिन्न संस्कृतियों के उन्नयन का प्रतीक कहा जा सकता है। कुम्भ की विशिष्ट पहचान वैश्विक स्तर पर है। विश्व के इतिहास में यह एकमात्र आयोजन ऐसा है, जिसमें किसी को भी आमंत्रित नहीं किया जाता फिर भी अनगिन संख्या में आस्था का सैलाब उमड़ पड़ता है। एक ऐसा महापर्व जिसमें करोड़ों श्रद्धालु पवित्र स्थल प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में श्रद्धा और आस्था के संगम में डुबकी लगाते हैं। यह पर्व आस्था का प्रतिमान ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत वर्ष की समृद्ध सांस्कृतिक, धार्मिक परम्पराओं की वैज्ञानिक, अनुपम एवं अद्भुत अमूर्त धरोहर है। भारत जम्मू-कश्मीर से कन्याकुमारी तक एवं गुजरात से अरुणाचल प्रदेश तक एक राष्ट्र है। यह एकता किसी राजनैतिक कारण से अथवा प्रशासनिक व्यवस्था के कारण नहीं है बल्कि इस राष्ट्र की धर्म प्राण संस्कृति के कारण है। यह जितना साधु-संन्यासियों और बैरागियों के लिए ही महत्वपूर्ण है, उतना ही साधारण जन के लिए महत्वपूर्ण है।

कुम्भ का शाब्दिक अर्थ है- घट अथवा घड़ा। कुम्भ का सम्बन्ध समुद्र मंथन के समय अंत में निकले अमृत कलश से जुड़ा है। भारत के महान धार्मिक तीर्थ क्षेत्र के रूप में स्थापित कुम्भ पर्व में पवित्र

ढाई हजार किलोमीटर लंबी गंगा का उद्गम स्थल हिमालय है और संपूर्ण जलग्रहण क्षेत्र लगभग 10,80,000 वर्ग किलोमीटर है। जिसमें से भारत में 8,61,000 वर्ग किलोमीटर ही है। शेष भाग बांग्लादेश में है।

नदियों के संगम पर लोग किसी अदृश्य शक्ति के आकर्षण से खिंचे चले आते हैं। सम्पूर्ण भारत में स्थान-स्थान पर छोटे-बड़े तीर्थ स्थान मिल जायेंगे। तीर्थ का शाब्दिक अर्थ है- पार कराने वाला स्थान अर्थात् जहाँ मोक्ष की प्राप्ति हो। कुम्भ मेलों के प्रारम्भ होने की विभिन्न मान्यताएं हैं। प्राचीन पुस्तकों में भी कुम्भ का वर्णन मिलता है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपनी पुस्तक में सम्राट हर्षवर्धन द्वारा अपना सर्वस्व दान करने की घटना का विस्तृत वर्णन किया है। मराठी भाषा की एक पुस्तक 'गुरु चरित्र' में भी 15वीं सदी में नासिक में हुए कुम्भ पर्व का वर्णन किया गया है। कुम्भ का सीधा सम्बन्ध जल के अमरत्व से है। जल, जिसके अभाव में जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। इतिहास के अध्ययन से जानकारी मिलती है कि सभी मानव सभ्यताएं नदियों के किनारे विकसित हुई। भारत में पवित्र नदियों को दैवीय उत्पत्ति स्थल माना जाता है इसलिए यहाँ नदियों को माँ का स्थान देकर पूजनीय और वन्दनीय माना है। नदियों के जल को देवी शक्ति का ही तरल रूप समझा गया है जो सृष्टि के सृजन में सहयोग करता है। हिमालय से निकलने वाली गंगा और यमुना नदियों के तट पर स्थान-स्थान पर तीर्थ क्षेत्र बने हैं। गंगा को मन्दाकिनी भी कहा जाता है, जो रुद्र प्रयाग में अलकनंदा तथा देव प्रयाग में भागीरथी के साथ मिलती है। जहाँ ये मिलती हैं, उस पवित्र स्थान को संगम कहा जाता है। कुम्भ मेले का आध्यात्मिक आकर्षण है संगम पर डुबकी लगाकर देवताओं को जल



चढ़ाना तथा अपने पूर्वजों को तर्पण करना।

इस धार्मिक पर्व को निभाने में कहीं न कहीं कर्तव्यों की अवहेलना हुई है। 2016 में हुए उज्जैन में हुए सिंहस्थ कुम्भ में बाहर से जल लाकर शिप्रा नदी में डलवाकर उसका जल स्तर बढ़ाया गया था। जलवायु परिवर्तन में जल का पारिस्थितिकी तंत्र सबसे अधिक महती भूमिका निभाता है। 25-30 वर्षों पूर्व जो गंगा पूर्ण रूपेण जल से छलकती हुई बारहमासी नदी थी। लगभग ढाई हजार किलोमीटर लम्बी गंगा का उद्गम स्थल हिमालय है, सम्पूर्ण जलग्रहण क्षेत्र लगभग 1080000 वर्ग किलोमीटर है। जिसमें से भारत में 861000 वर्ग किलोमीटर ही है शेष भाग बांग्लादेश में है। गंगा दोनों देशों की जीवन रेखा है। दुर्भाग्य यह है कि वर्तमान में यह दुनिया की छठी सर्वाधिक प्रदूषित नदी है। शहरों में सीवरेज तथा औद्योगिक कचरा



लगातार गिरने से गंगा मैली हुई है। सहायक नदियों में बड़े बांध के कारण भी इसकी प्रवाह प्रणाली में कमी आई है। उत्तराखंड पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के एक अध्ययन के द्वारा इस बात की पुष्टि हुई है कि गंगा के जल को अनेक स्थानों पर ग्रहण करने योग्य नहीं है। पीना तो दूर, जल सिंचाई योग्य भी नहीं है। इसमें जल को उपयोग की दृष्टि से चार श्रेणियों में विभक्त किया गया- पीने योग्य, स्नान करने योग्य, सिंचाई योग्य एवं किसी भी उपयोग में नहीं लेने योग्य।

1985 में गंगा एक्शन प्लान का प्रारम्भ हुआ। करोड़ों रुपये खर्च होने के पश्चात् भी आशानुरूप परिणाम प्राप्त नहीं हुए। केंद्र सरकार द्वारा 2014 में नमामि गंगे अभियान प्रारम्भ किया गया। इस परियोजना को नदी के प्रदूषण को दूर करने तथा नदी को पुनर्जीवित करने के लिए प्रारम्भ किया गया है। इस अभियान में घाटों का नवीकरण, वृक्षारोपण, जैव विविधता संरक्षण, नदी के सतह की सफाई, गंदे नालों की सफाई इत्यादि कार्य शामिल किये गए हैं। सहायक नदियों की सफाई भी इसके प्रमुख कार्यों में से एक है।

आधुनिक जीवन शैली और विकास के नाम पर हमारे द्वारा किये गए कार्यों का मूल्य पर्यावरण के विनाश के रूप में चुकाया गया है। अब समय आ गया है कि हम जागरूक होकर उन मूल्यों की भरपाई करें। अगर मनुष्य सभ्यता को जीवित रखना है तो हमें अपने जलस्रोतों को प्रदूषण से बचाना ही होगा। आईये, कुम्भ मेले के पावन अवसर पर हम अपने जलस्रोतों को बचाने का संकल्प लें।



प्रकृति

कुंभ से मिले पर्यावरण संरक्षण का संदेश

कुंभ के आयोजन को पर्यावरण संरक्षण का संदेश एवं सीख देने वाला बनाना चाहिए

राहुल कुमार गौरव

कुंभ, धर्म और प्रकृति, दोनों पर निर्भर है। ईश्वर की तरह प्रकृति की लाठी में भी आवाज़ नहीं होती है। प्रकृति का पलटवार बड़ा खतरनाक होता है। उत्तराखंड इसका जीता-जागता उदाहरण है। हरिद्वार में कुंभ आयोजन का हो रहा है। कुंभ हिन्दू धर्म में आस्था का सबसे बड़ा प्रतीक।

मैं इस लेख के माध्यम से जो कहना चाहता हूँ, उसकी शुरुआत एक आकड़े और किस्से से करता हूँ। 2015 के नासिक कुंभ के बाद सफाई सुनिश्चित करने के लिए हाईकोर्ट को दखल देना पड़ा था। आयोजन के दौरान निकले 25 हजार टन ठोस कचरे का कोई प्रबंधन नहीं किया गया। यह नदियों और शहर के नालों में बहा दिया गया, जिससे उनका बहाव रुक गया। 2013 में 33,903 अस्थायी शौचालयों का निर्माण किया गया था, जिन्हें मल संग्रहण के लिए बनाए गए अस्थायी गड्ढों से जोड़ा गया था। सीएजी ने पाया कि इन गड्ढों में भरे मल को भूगर्भ जल के संपर्क में आने से रोकने की कोई

हमें कुंभ के आयोजन को पर्यावरण संरक्षण का संदेश एवं सीख देने वाला बनाना चाहिए। समारोह को पूरी तरह पर्यावरण फ्रेंडली बनाने की कोशिश करना चाहिए।

हमारी लापरवाही के कारण कुंभ जैसे पवित्र आयोजन में पर्यावरण को क्षति पहुंचती है। जबकि कुंभ ही नहीं, भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू धर्म भी पर्यावरण संरक्षण का संदेश देता है।

व्यवस्था नहीं की गई थी। साथ ही यह भी पाया गया कि उत्सव के दौरान नदियों के पानी की गुणवत्ता नहाने के लायक नहीं थी।

यह जानकारी और आंकड़े सरकारी हैं। इस आकड़े से ध्यान आता है कि हमारी लापरवाही के कारण कुम्भ जैसे पवित्र आयोजन में पर्यावरण को क्षति पहुंचती है। जबकि कुम्भ ही नहीं, अपितु भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू धर्म पर्यावरण संरक्षण का संदेश देता है। ऐसे में कुम्भ के आयोजन से प्रकृति को क्षति पहुंचे यह तो ठीक बात नहीं।

हमारे देश में धर्म पर कोई नहीं बोलना चाहता है। धर्म पर नहीं बोलना मनुष्यता का हरण करना है। धर्म का मतलब है, जीने का सलीका और विश्वास। उसी हिन्दू धर्म के पर्व में पर्यावरण का विनाश हो रहा है, जिस धर्म में पर्यावरण को भी भगवान का दर्जा है।



सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता का पर्व कुंभ

यह पर्व है आस्था का, राष्ट्रीय एकता का, आध्यात्मिकता का, स्वानुशासन का पर्यावरण टीम

सदियों पूर्व मानव ने मृत्तिका को जल से सिंचित कर, मोहक आकार प्रदान कर, अग्नि पर तपाते हुए कुम्भ का निर्माण किया और यह कुम्भ बिना किसी धर्म या जाति भेदभाव के पृथ्वी वासियों को शीतल जल प्रदान कर उन्हें तृप्त करता रहा। 12 वर्ष के अन्तराल पर आने वाले हमारे राष्ट्रीय पर्व 'कुम्भ मेला' का यही पर्याय है। प्रत्येक व्यक्ति को कुम्भ के आयोजन की प्रतीक्षा रहती है। न केवल भारत के सुदूर क्षेत्रों में बसने वाले बल्कि विदेशों में बसे भारतीय भी इस पर्व में सहभागी होने को उत्कण्ठित रहते हैं। कुम्भ में धार्मिक आस्था का उत्कर्ष देखने को मिलता है। विविधता में एकता का साक्षी यह पर्व जहाँ भारतीयों को आल्हादित करता है वहीं विदेशियों को अचम्भित करता है। बिना किसी निमन्त्रण के करोड़ों हिन्दुओं का एक स्थान पर संगम, आत्मानुशासित संचालन, व्यवस्थित कार्यक्रम व समारोहों का भव्य आयोजन, विदेशियों को दाँतों तले अंगुली दबाने को मजबूर कर देता है।

देवों के अमृत कलश से धरा पर छलकी अमृत बूंदों के आध्यात्मिक पान हेतु हरिद्वार में गंगा, उज्जैन में क्षिप्रा, नासिक में गोदावरी और प्रयागराज में त्रिवेणी पर होने वाले संगम में भाग लेने हेतु सभी धर्मावलम्बी लालायित रहते हैं। ब्रह्म पुराण व स्कन्ध पुराण के श्लोकों के माध्यम से इसे समझा जा सकता है-

विन्ध्यस्य दक्षिणे गंगा गौमती सा निगद्यते।
उत्त्रे सापि विन्ध्यस्य भगीरत्यभिधीयते ॥

**विन्ध्यस्य दक्षिणे गंगा गौमती सा निगद्यते।
उत्त्रे सापि विन्ध्यस्य भगीरत्यभिधीयते॥**

अमृत की बूंदें छलकने के समय जिन राशियों में सूर्य, चन्द्रमा व बृहस्पति की स्थिति के विशिष्ट योग के अवसर रहते हैं, वहाँ कुम्भ पर्व का इन राशियों में ग्रहों के संयोग पर आयोजन होता है। अमृत कलश की रक्षा में सूर्य, बृहस्पति व चन्द्रमा के विशेष प्रयत्न रहे थे। इसी कारण इन्हीं ग्रहों की उन विशिष्ट स्थितियों में कुम्भ पर्व मनाने की परम्परा है।

प्रत्येक तीन साल में हरिद्वार, उज्जैन, प्रयागराज और नासिक में आयोजित होने वाले मेले को कुम्भ के नाम से जानते हैं। हरिद्वार और प्रयागराज में प्रत्येक छः वर्ष में आयोजित होने वाले कुम्भ को अर्धकुम्भ कहा जाता है। बारह साल में आयोजित होने वाले कुम्भ को पूर्ण कुम्भ कहा जाता है। इसके अतिरिक्त केवल प्रयागराज में 144 वर्ष के अन्तराल में आयोजित होने वाले कुम्भ को महाकुम्भ कहा जाता है। वर्ष 2013 में प्रयागराज में महाकुम्भ का आयोजन हुआ था। विद्वत्जनों के अनुसार अगला महाकुम्भ 138 वर्ष उपरान्त होगा। कुंभ के दौरान ग्रहों की स्थिति हरिद्वार से बहती गंगा के किनारे पर स्थित हर की पौड़ी पर गंगाजल को पुनीत, पावन एवं औषधिकृत करती है। उन दिनों यह अमृतमय हो जाती है। ग्रहों की यह स्थिति एकाग्रता तथा ध्यान साधना के लिए उत्कृष्ट होती है।



Pics by Ashoo Sharma

एव मुक्त्वाद गत गंगा कलया वन संस्थिता।

गंगेश्वरं तु यः पश्येत स्नात्वा शिप्रामेभासि प्रिये ॥

यह पर्व है- आस्था का, राष्ट्रीय एकता का, आध्यात्मिकता का, स्वानुशासन का, सामाजिक सम्मिलन का एवं सदियों से संरक्षित संस्कृति का। भक्ति ज्ञान और वैराग्य के इस पर्व में वातावरण बहुत ही पवित्र एवं सुखद होता है। चारों ओर वेद मन्त्रों की ध्वनियाँ गुंजायमान होती हैं। साधु-सन्त आध्यात्मिक उन्नति

एव मुक्त्वाद गत गंगा कलया वन संस्थिता। गंगेश्वरं तु यः पश्येत स्नात्वा शिप्रामेभासि प्रिये॥

हेतु मार्गदर्शन करते हैं। इस दिव्य परिवेश का सात्विक प्रभाव सभी जीवात्माओं पर दृष्टिगोचर होता है। महाराज हर्षवर्धन के शासन काल में आयोजित होने वाले कुम्भ मेलों का वर्णन इतिहासकारों द्वारा किया गया है। इसका उल्लेख ह्युनसांग ने भी अपने लेखों में किया है। इस पर्व पर हिमालय और कन्याकुमारी एक हो जाते हैं। सुदूर बसे अरुणाचल व कच्छ की दूरियाँ सिमट जाती हैं। इस पर्व का आकर्षण राजा और रंक को कुम्भ नगरी में एक समान कर देता है। स्त्री-पुरुष का अन्तर समाप्त हो जाता है। झोंपड़ी और महल की असमानता मिट जाती है। वेशभूषा और भाषा भिन्न होते हुए भी सभी आध्यात्मिकता के सूत्र में बंधे कुम्भ नगरी में खिंचे चले आते हैं। सभी में एक ही भावना व एक ही संस्कृति तथा समरसता के दर्शन होते हैं। चारों दिशाएँ 'हर हर गंगे' के उद्घोष से गुंजायमान हो उठती हैं। मिलन का यह पर्व श्रद्धालुओं को मानसिक व आत्मिक रूप से पवित्र कर देता है। मोक्ष प्राप्ति का द्वार खुल जाता है। मानव व्यष्टि से समष्टि में समाहित हो जाता है।

विराट भारत का विराट पर्व कुम्भ अपने आप में अद्वितीय है। विश्व भर में अकेला ऐसा धार्मिक महोत्सव, जिसमें करोड़ों की संख्या में श्रद्धालु एक ही आस्था के छत्र के नीचे एकत्रित होते हैं। श्रद्धा के सूत्र में बंधे भक्तजन इस गरिमामय पर्व पर अनेक प्रकार के दान करते हैं, जैसे- अन्न दान, वस्त्र दान, पितरों के लिए दान, गुप्त दान आदि। यहाँ गरीब लोगों के रहने, खाने व भरण-पोषण की व्यवस्था मुफ्त तथा सुचारु रूप से होती है। भक्तों की संख्या तो करोड़ों में होती है फिर भी इतनी शांति, इतनी प्रीति, आनंद, निष्ठा, उत्साह सेवा करने का भाव, श्रद्धा और धर्म के प्रति निष्ठा देखने को मिलती है। उनकी आस्था, उनको सदैव हितकारी कार्य करने के लिए प्रेरित करती है तथा वे अपने इष्ट को याद करते हुए अपने आप को भाग्यवान अनुभव करते हैं। एक ही समय में एक ही जगह पर लाखों-करोड़ों की संख्या में श्रद्धालुओं- भक्तों का जमावड़ा इतने शांतिपूर्ण ढंग से अपनी भक्ति में लीन रहता है। भक्ति और आस्था के एक धागे में पिरोए हुए मोतियों की तरह लोग सुव्यवस्था और शांति के प्रतीक बन जाते हैं। उनको नियम और कायदे में रखने के लिए किसी भी प्रकार की कानून व्यवस्था की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यह दृश्य अपने आप में ही एक आश्चर्य पैदा करने वाला होता है। भारत के अतिरिक्त सम्पूर्ण जगत में कोई भी अन्य देश, समुदाय, जाति, प्रांत ऐसे किसी विशाल अनुष्ठान का आयोजन नहीं करता। जिस नदी के किनारे पर्व का आयोजन होता है वह नदी भक्तजनों की माँ होती है और श्रद्धालु जन उसके बालक। यह माँ और पुत्र का सम्बन्ध भक्तों को प्रकृति के रक्षण हेतु प्रेरित करता है। भारतीय संस्कृति में धर्म और धर्म से जुड़े पर्वों का सबसे उत्तम प्रतीक है कुंभ मेला।



हर घर जल

जल जीवन मिशन का लोकतंत्रीकरण

राज्यों का दावा है कि एक लाख 80 हजार बस्तियों को इस योजना से जोड़ दिया गया है

सयानंगशु मोदक एवं निर्मल्या चौधरी

स्वच्छ भारत की सफलता के बाद, मोदी सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों के हर घर को नल का पानी उपलब्ध कराने का अभियान शुरू किया है। केंद्र सरकार की स्वच्छ भारत योजना की सफलता निश्चित रूप से इस बात में निहित थी कि इसे जनता को केंद्र में रखकर चलाया गया। अब मोदी सरकार इसी सफलता को दोहराते हुए जल जीवन मिशन पर काम कर रही है, जिसके तहत देश के सभी गांवों में घर घर तक नल से पानी पहुंचाने (Functional Tap Connection FHTC) का लक्ष्य वर्ष 2024 तक इस तरह प्राप्त किया जाए कि सभी को मामूली क्रीम अदा करने पर तय गुणवत्ता वाला पीने का पानी नियमित रूप से मिले। ये प्रोजेक्ट शुरू होने के एक साल के भीतर देश के तमाम राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने दावा किया है कि उन्होंने एक लाख 80 हजार बस्तियों को 'हर घर जल' योजना से जोड़ दिया है। इन बस्तियों के हर घर तक नल का कनेक्शन (FHTC) पहुंचा दिया गया है। ये प्रोजेक्ट, संयुक्त राष्ट्र के स्थायी विकास के लक्ष्य 6 (SDG 6) को हासिल करने को लेकर भारत की गंभीर प्रतिबद्धता को दर्शाता है, जिसके तहत सबको साफ पानी और शौचालय की सुविधा उपलब्ध कराना है।

किन बातों पर ध्यान देने की ज़रूरत

एक उप-महाद्वीप के आकार वाले भारत जैसे विशाल देश के सामने अगर तमाम तरह की चुनौतियां खड़ी होती हैं, तो इसके अलग अलग क्षेत्रों की अलग जलवायु, भौगोलिक बनावट, बस्तियों की बसावट, पानी के स्रोत और विकास की स्थितियों से कई अवसर भी मिलते हैं। इस विकास के कारण



पर्यावरण पर पड़ने वाला प्रभाव, मौसमी चुनौतियां, सांस्कृतिक रीति-रिवाज और पसंद-नापसंद की समस्याएं भी सामने आती हैं। लंबी अवधि के लिए टिकाऊ विकास देने और ऐसी योजनाओं को सबके लिए मुफ़ीद बनाने की चुनौती होती है, जिसकी परिकल्पना केंद्र द्वारा तैयार की जाती है। भारत जैसे विविधता वाले देश में हम एक ही योजना को उसी स्वरूप में हर जगह नहीं लागू कर सकते। हमें उसमें

क्षेत्रीय विविधताओं और स्थानीय चुनौतियों को भी शामिल करना होगा। जल जीवन मिशन जैसे कार्यक्रम को भी सफल होने के लिए हर इलाके की अपनी खासियत का खयाल करना होगा और इस योजना को बनाने से लेकर लागू करने तक में लचीलापन बनाए रखना होगा। इस मिशन के तहत सबसे निचले स्तर की भागीदारी को बढ़ावा देना होगा। इसकी योजना बनाने और उसके क्रियान्वयन में सबको साझीदार बनाने की नीति अपनानी होगी। जैसे कि कहीं पाइपलाइन बिछाने में उस विशेष क्षेत्र की

**जल संरक्षण को अपनाना होगा,
हर व्यक्ति तक जल पहुंचाना होगा।**

खासियतों का ध्यान रखना होगा। इससे पानी की बर्बादी और कुछ लोगों को इस योजना के लाभ से महरूम रखने से बचा जा सकेगा। सभी को भरोसेमंद व्यवस्था से साफ पीने का पानी उपलब्ध कराने का लक्ष्य प्राप्त करने में दिक्कतें कम की जा सकेंगी और इस मिशन को सफल बनाया जा सकेगा।

योजना स्थानीय परिवेश के हिसाब से हो

मध्य भारत का इलाका, देश में सबसे ज्यादा आदिवासियों वाला क्षेत्र है। यहां की जमीन पठारी है। बस्तियों की बसावट में बिखराव दिखता है। यहां तक कि मिली-जुली आबादी वाले गांवों में भी, आदिवासी समुदाय के लोग गांव के बाक़ी हिस्से से कटे और ग़ैर आदिवासी मुहल्लों से दूर बसे होते हैं। ऐसे बिखराव वाली बसावट में अगर कोई पाइपलाइन गांव के केंद्र तक बिछाई जाती है और उसका प्रबंधन वहीं से होता है, तो वो काफ़ी महंगा सौदा साबित हो सकता है। इस बात की पूरी संभावना होगी कि योजना बनाने और उसे लागू करने की प्रक्रिया के दौरान या तो आदिवासी मुहल्ले छूट जाएंगे या फिर पानी के वितरण का जो डिज़ाइन बनाया जाएगा, वो उनके हित में नहीं होगा। किसी भी स्थिति में इससे पानी के समान वितरण का लक्ष्य हासिल करने में दिक्कतें आएंगी, खास तौर से तब और जब पानी की किल्लत का दौर होगा। सबको पानी की समान उपलब्धता सुनिश्चित कराने के लिए, योजना बनाने के समय ही

मुहल्लों की बसावट और अलग अलग बस्तियों के बीच की दूरी का खयाल रखना पहली शर्त बन जाता है। इसके बाद ऐसी योजना पर काम करने की ज़रूरत होगी, जो स्थानीय परिवेश के हिसाब से उचित हो।

जल जीवन मिशन जैसे कार्यक्रम को भी सफल होने के लिए हर इलाके की अपनी खासियत का खयाल करना होगा और इस योजना को बनाने से लेकर लागू करने तक में लचीलापन बनाए रखना होगा। इस मिशन के तहत सबसे निचले स्तर की भागीदारी को बढ़ावा देना होगा।

ऐसी योजना तभी बनाई जा सकती है, जब स्थानीय लोगों की जानकारी और समझ का प्रयोग किया जाए। ऐसे संगठनों को योजना बनाने में शामिल किया जाए जो उस इलाके से भली-भांति परिचित हों। इसके लिए योजना निर्माण की प्रक्रिया को समावेशी और भागीदारी वाला बनाना होगा।

उत्तर, पूर्व और उत्तर-पूर्वी भारत के मैदानी और मुलायम मिट्टी वाले इलाकों के समुदाय इस मामले में खुशकिस्मत हैं। उनके पास पानी की उपलब्धता अधिक है। लेकिन, उन्हें हर साल बाढ़ की मुसीबत भी झेलनी पड़ती है। इससे हर ओर 'पानी ही पानी के मंजर से भी जूझना पड़ता है। लेकिन, इसमें से एक बूंद पानी भी पीने लायक नहीं होता।' जैसे हालात अभी हैं, वैसे में पीने और घरेलू इस्तेमाल का ज्यादातर पानी, भूगर्भ से निकाला जाता है। जैसे कि हैंडपंप द्वारा। लेकिन, बाढ़ के दौरान हैंडपंप काम करना बंद कर देते हैं। बाढ़ के चलते कम गहराई वाले पानी के स्रोत भी खराब हो जाते हैं। ज़मीन के ऊपर वाले पानी के स्रोत भी स्थिर हो जाते हैं। उनका पानी पीने लायक नहीं बचता। ऐसे में जल जीवन मिशन के सामने इन घने बसे क्षेत्रों में पूरे साल पीने का पानी मुहैया कराने की चुनौती है। क्योंकि, इन इलाकों को नियमित रूप से बाढ़ की मुसीबत झेलनी पड़ती है। इस चुनौती से निपटने के लिए पानी के मौजूदा स्रोतों का नियमित रूप से नवीनीकरण करना होगा। इसके लिए स्थानीय स्तर पर डिज़ाइन के जो मानक इस्तेमाल में आते हैं, उनका उपयोग किया जा सकता है। क्योंकि वो सालाना मुसीबतों से निपटने में काफ़ी लोचदार होते हैं। कहने का मतलब ये है कि हैंडपंप ऊंची जगहों पर लगाने होंगे। नल का कनेक्शन भी ऊंचाई पर देना होगा। इसके लिए बाढ़ के उच्चतम स्तर (HFL) का भी ध्यान रखना होगा और इनकी निगरानी स्थानीय लोगों के हाथ में देनी होगी। यहां पर एक बार फिर ये दोहराने की ज़रूरत है कि योजना निर्माण में स्थानीय लोगों को इस तरह भागीदार बनाना होगा, जिससे स्थानीय लोगों के इनोवेशन का भी लाभ लिया जा सके। क्योंकि ये इनोवेशन स्थानीय ज़रूरतों के हिसाब से किए जाते हैं। कहीं पर भी लोचदार बुनियादी ढांचा विकसित करने के लिए उसका स्थानीय हकीकतों का सामना करने लायक होना ज़रूरी होता है।

पानी का स्रोत टिकाऊ हो

सभी लोगों को पाइप के ज़रिए साफ़ और भरोसेमंद स्रोत से पीने का पानी मुहैया कराना इस बात पर निर्भर करता है कि पानी का स्रोत टिकाऊ हो। यहां पर भी हम अलग अलग जगहों पर विभिन्न तरह की चुनौतियों का सामना करते हैं। देश का एक बड़ा हिस्सा प्रदूषण से जूझ रहा है- इस प्रदूषण का कारण मानवीय गतिविधियां भी हैं और वातावरण से भी जुड़ा है। सबको साफ़ पानी उपलब्ध कराने के लिए ऐसे स्रोत का चुनाव करना ज़रूरी हो जाता है, जिस पर न तो मानवीय गतिविधियों के प्रदूषण का असर हो और न ही वातावरण के। इसके लिए पानी के स्रोत फिर चाहे वो नदी का हो या भूगर्भ जल का, उसकी ग्रैन्यूलर मैपिंग से मदद मिल सकती है। जिससे ये पता चलता है कि पानी के स्रोत के घटने

की रफ़्तार क्या है और वो कितना प्रदूषित है। पानी के स्रोत को टिकाऊ बनाए रखने के लिए ये जानकारी रखना ज़रूरी है। पहाड़ी इलाकों में तो इस बात का ध्यान रखना और भी ज़रूरी हो जाता है। जैसे कि हिमालय वाला इलाका, पूर्वी और पश्चिमी घाट, जहां पानी के किसी एक स्रोत जैसे कि झरने पर निर्भरता सबसे अधिक होती है। यहां सब तक नल का पानी पहुंचाने के लिए जल जीवन मिशन को पानी के स्रोतों का दायरा बढ़ाने के साथ साथ उनके रख-रखाव को भी अपनी योजना का हिस्सा बनाना होगा। इसीलिए, किसी पहाड़ी इलाके में जल जीवन मिशन को झरनों का संरक्षण करने को बढ़ावा देना होगा। इसके लिए उसे विकेंद्रीकृत स्प्रिंगशेड मैनेजमेंट का तरीका अपनाने की ज़रूरत होगी।

सरकार की तारीफ़ इस बात के लिए ज़रूर करनी चाहिए कि उसने ऐसी बुनियादी सुविधा उपलब्ध कराने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है। लेकिन, जल जीवन मिशन की सफलता इसी बात पर निर्भर करेगी कि ये कार्यक्रम स्थानीय ज़रूरतों के हिसाब से किस हद तक लचीलापन अपनाता है। इस योजना की केंद्र से फंडिंग को इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि इसमें विकेंद्रीकृत और सामुदायिक स्तर पर योजना के निर्माण और उसके क्रियान्वयन की गुंजाइश बनी रहे। स्वच्छ भारत

सरकार की तारीफ़ इस बात के लिए ज़रूर करनी चाहिए कि उसने ऐसी बुनियादी सुविधा उपलब्ध कराने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है। लेकिन, जल जीवन मिशन की सफलता इसी बात पर निर्भर करेगी कि ये कार्यक्रम स्थानीय ज़रूरतों के हिसाब से किस हद तक लचीलापन अपनाता है।

योजना की सफलता का एक बड़ा कारण इस योजना में सामुदायिक और ग़ैर सरकारी संगठनों की अलग अलग चरणों में भागीदारी भी था। अब जल जीवन मिशन को भी हर इलाके की खूबियों और कमियों के हिसाब से ढालना होगा। इस योजना को पाइपलाइन और नल के कनेक्शन को लेकर न्यूनतम विकेंद्रीकरण से आगे बढ़कर स्थानीय इनोवेशन को अपने साथ लाना होगा। ग़ैर सरकारी संगठनों और समुदायों की भागीदारी को केंद्र से पर्याप्त फंडिंग का योगदान मिलना ज़रूरी है। तभी जल जीवन मिशन स्थायी विकास के अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा।

पानी की चिंता

आइए बनाएं एक पानीदार समाज

आज भारत बोतलबंद पानी की खपत के मामले में दुनिया के दस शीर्ष देशों में शामिल है

प्रो. संजय द्विवेदी

प्रकृति के साथ निरंतर छेड़छाड़ ने मनुष्यता को कई गंभीर खतरों के सामने खड़ा कर दिया है। देश की नदियां, ताल-तलैया, कुएं सब हमसे सवाल पूछ रहे हैं। हमारे ठूठ होते गांव और जंगल हमारे सामने एक प्रश्न बनकर खड़े हैं। पर्यावरण के विनाश में लगी व्यवस्था और उद्योग हमें मुंह चिढ़ा रहे हैं। इस भयानक शोषण के फलित भी सामने आने लगे हैं। मानवता एक ऐसे गंभीर संकट को महसूस कर रही है और कहा जाने लगा है कि अगला विश्वयुद्ध पानी के लिए होगा। बारह से पंद्रह रूपए में पानी खरीद रहे हम क्या कभी अपने आप से ये सवाल पूछते हैं कि आखिर हमारा पानी इतना महंगा क्यों है। जब हमारे शहर का नगर निगम जलकर में थोड़ी बढ़त करता है तो हम आंदोलित हो जाते हैं, राजनीतिक दल सड़क पर आ जाते हैं। लेकिन पंद्रह रूपए में एक लीटर पानी की खरीद हमारे मन में कोई सवाल खड़ा नहीं करती। उदाहरण के लिए दिल्ली जल निगम की बात करें तो वह एक हजार लीटर पानी के लिए साढ़े तीन रूपए लेता है। यानी की तीन लीटर पानी के लिए एक पैसे से कुछ अधिक। यही पानी मिनरल वाटर की शकल में हमें तकरीबन बयालीस सौ गुना से भी ज्यादा पैसे का पड़ता है। आखिर हम कैसा भारत बना रहे हैं। इसके खामोशी के चलते दुनिया में बोतलबंद पानी का कारोबार तेजी से उठ रहा है और 2004 में ही इसकी खपत दुनिया में 154 बिलियन लीटर तक पहुंच चुकी थी। इसमें भारत जैसे

क्या हमारी आम जनता की पहुंच में है। यह दुर्भाग्य है कि हमारे गांवों में मल्टीनेशनल कंपनियों के पेय पदार्थ पहुंच गए किंतु आज तक हम आम लोगों को पीने का पानी सुलभ नहीं करा पाए। उस आदमी की स्थिति का

**जनहित में यह सूचना जारी,
जल संरक्षण की करो तैयारी।**

अंदाजा लगाइए जो इन महंगी बोतलों में बंद पानी तक नहीं पहुंच सकता। पानी का संघर्ष एक ऐसी शक्ति ले रहा है जहां लोग एक-दूसरे की जान लेने को आमादा हैं।

पानी की चिंता आज सब प्रकार से मानवता की सेवा सबसे बड़ा काम है। आंकड़े चौंकानेवाले हैं कि तु ये खतरे की गंभीरता का अहसास भी कराते हैं। भारत में सालाना 7 लाख, 83 हजार लोगों की मौत खराब पानी पीने और साफ-सफाई न होने से हो जाती है। दूषित जल के चलते हर साल देश की अर्थव्यवस्था को करीब पांच अरब रूपए का नुकसान हो रहा है। देश के कई राज्यों के लोग आज भी दूषित जल पीने को मजबूर हैं क्योंकि यह उनकी मजबूरी भी है।

पानी को लेकर सरकार, समाज और मीडिया तीनों को सक्रिय होने की जरूरत है। आजादी के इतने सालों के बाद पानी का सवाल यदि आज और गंभीर होकर हमारे है तो हमें सोचना होगा कि आखिर हम किस दिशा की ओर जा रहे हैं। पानी की सीमित उपलब्धता को लेकर हमें सोचना होगा कि आखिर हम अपने समाज के सामने इस चुनौती का क्या समाधान रखने जा रहे हैं।

मीडिया की जिम्मेदारी

मीडिया का जैसा विस्तार हुआ है उसे देखते हुए उसके सर्वव्यापी प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। मीडिया सरकार, प्रशासन और जनता सबके बीच एक ऐसा प्रभावी माध्यम है जो ऐसे मुद्दों पर अपनी खास दृष्टि को संप्रेषित कर सकता है। कुछ मीडिया समूहों ने पानी के सवाल पर जनता को जगाने का काम किया है। वह चेतना के स्तर पर भी है और कार्य के स्तर पर भी। ये पत्र समूह अब जनता को जगाने के साथ उनके घरों में



हिस्सा भी 5.1 बिलियन लीटर का है। यह कारोबार चालीस प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ रहा है। आज भारत बोतलबंद पानी की खपत के मामले में दुनिया के दस शीर्ष देशों में शामिल है। लेकिन ये पानी

वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम लगाने तक में मदद कर रहे हैं। इसी तरह भोपाल की सूखती झील की चिंता को जिस तरह भोपाल के अखबारों ने मुद्दा बनाया और लोगों को अभियान शामिल किया उसकी सराहना की जानी चाहिए। इसी तरह नर्मदा को लेकर स्वर्गीय अमृतलाल वेगड़ से लेकर स्वर्गीय अनिल दवे तक के प्रयासों को इसी नजर से देखा जाना चाहिए। अपनी नदियों, तालाबों झीलों के प्रति जनता के मन में सम्मान की स्थापना एक बड़ा काम है जो बिना मीडिया के सहयोग से नहीं हो सकता।

उत्तर भारत की गंगा-यमुना जैसी पवित्र नदियों को भी समाज और उद्योग की बेरुखी ने काफी हद तक नुकसान पहुंचाया है। दिल्ली में यमुना जैसी नदी किस तरह एक गंदे नाले में बदल गयी तो लखनऊ की गोमती का क्या हाल है किसी से छिपा नहीं है। देश की नदियों का जल और उसकी चिंता हमें ही करनी होगी। मीडिया ने इस बड़ी चुनौती को समय रहते समझा है, यह बड़ी बात है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस सवाल को मीडिया के नियंता अपनी प्राथमिक चिंताओं में शामिल करेंगे। ये कुछ बिंदु हैं जिनपर मीडिया निरंतर अभियान चलाकर पानी को बचाने में मददगार हो सकता है-

1. पानी का राष्ट्रीयकरण किया जाए और इसके लिए एक अभियान चलाया जाए।
2. छत्तीसगढ़ की शिवनाथ नदी को एक पूंजीपति को बेचकर जो शुरूआत हुयी उसे दृष्टिगत रखते हुए नदी बेचने की प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए।
3. उद्योगों के द्वारा निकला कचरा हमारी नदियों को नष्ट कर रहा, पर्यावरण को भी। उद्योग प्रायः प्रदूषणरोधी संयंत्रों की स्थापना तो करते हैं पर बिजली के बिल के नाते उसका संचालन नहीं करते। उद्योगों की हैसियत के मुताबिक प्रत्येक उद्योग का प्रदूषणरोधी संयंत्र का मीटर अलग हो और उसका न्यूनतम बिल तय किया जाए। इससे इसे चलाना उद्योगों की मजबूरी बन जाएगा।
4. केंद्र सरकार द्वारा नदियों को जोड़ने की योजना को तेज किया जाना चाहिए।
5. बोलतबंद पानी के उद्योग को हतोत्साहित किया जाना चाहिए।
6. सार्वजनिक पेयजल व्यवस्था को दुरुस्त करने के सचेतन और निरंतर प्रयास किए जाने चाहिए।
7. गांवों में स्वजलधारा जैसी योजनाओं को तेजी से प्रचारित करना चाहिए।
8. परंपरागत जल स्रोतों की रक्षा की जानी चाहिए।
9. आम जनता में जल के संयमित उपयोग को लेकर लगातार जागरूकता के अभियान चलाए जाने

पानी को लेकर सरकार, समाज और मीडिया तीनों को सक्रिय होने की जरूरत है। आजादी के इतने सालों के बाद पानी का सवाल यदि आज और गंभीर होकर हमारे है तो हमें सोचना होगा कि आखिर हम किस दिशा की ओर जा रहे हैं।

चाहिए।

10. सार्वजनिक नलों से पानी के दुरुपयोग को रोकने के लिए मोहल्ला समितियां बनाई जा सकती हैं। जिनकी सकारात्मक पहल को मीडिया रेखांकित कर सकता है।
11. बचपन से पानी के महत्व और उसके संयमित उपयोग की शिक्षा नई पीढ़ी को देने के लिए मीडिया बच्चों के निकाले जा रहे अपने साप्ताहिक परिशिष्टों में इन मुद्दों पर बात कर सकता है। साथ स्कूलों में पानी के सवाल पर आयोजन करके नई पीढ़ी में संस्कार डाले जा सकते हैं।

देश की नदियों का जल और उसकी चिंता हमें ही करनी होगी। मीडिया ने इस बड़ी चुनौती को समय रहते समझा है, यह बड़ी बात है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस सवाल को मीडिया के नियंता अपनी प्राथमिक चिंताओं में शामिल करेंगे।

12. वाटर हार्वेस्टिंग को नगरीय क्षेत्रों में अनिवार्य बनाया जाए, ताकि वर्षा के जल का सही उपयोग हो सके।
 13. जनप्रबंधन की सरकारी योजनाओं की कड़ी निगरानी की जाए साथ ही बड़े बांधों के उपयोगों की समीक्षा भी की जाए।
 14. गांवों में वर्षा के जल का सही प्रबंधन करने के लिए इस तरह के प्रयोग कर चुके विशेषज्ञों की मदद से इसका लोकव्यापीकरण किया जाए।
 15. हर लगने वाले कृषि और किसान मेलों में जलप्रबंधन का मुद्दा भी शामिल किया जाए, ताकि फसलों और खाद के साथ पानी को लेकर हो रहे प्रयोगों से भी अवगत हो सकें, ताकि वे सही जल प्रबंधन भी कर सकें।
 16. विभिन्न धर्मगुरुओं और प्रवचनकारों से निवेदन किया जा सकता है कि वे अपने सार्वजनिक समारोहों और प्रवचनों में जलप्रबंधन को लेकर अपील जरूर करें। हर धर्म में पानी को लेकर सार्थक बातें कही गयी हैं उनका सहारा लेकर धर्मप्राण जनता में पानी का महत्व बताया जा सकता है।
 17. केंद्र और राज्य सरकारें पानी को लेकर लघु फिल्में बना सकते हैं जिन्हें सिनेमाहालों में फिल्म के प्रसारण से पहले या मध्यांतर में दिखाया जा सकता है।
 18. पारंपरिक मीडिया के प्रयोग से गांव-कस्बों तक यह संदेश पहुंचाया जा सकता है।
 19. पत्रिकाओं के पानी को लेकर अंक निकाले जा सकते हैं जिनमें दुनिया भर पानी को लेकर हो रहे प्रयोगों की जानकारी दी जा सकती है।
 20. राज्यों के जनसंपर्क विभाग अपने नियमित विज्ञापनों में गर्मी और बारिश के दिनों में पानी के संदेश दे सकते हैं।
- ऐसे अनेक विषय हो सकते हैं जिसके द्वारा हम जल के सवाल को एक बड़ा मुद्दा बनाते हुए समाज में जनचेतना फैला सकते हैं। यही रास्ता हमें बचाएगा और हमारे समाज को एक पानीदार समाज बनाएगा। पानीदार होना कोई साधारण बात नहीं है, क्या हम और आप इसके लिए तैयार हैं।

(लेखक भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली के महानिदेशक हैं)

पेयजल संकट

महिलाएं पानी से भर रहीं बुंदेलखंड की गोद

54 गांवों में 1140 जल सहेलियों ने 50 तालाब बनाए, 5000 पौधे रोपे और दो नदियों को दिया नया जीवन

अर्कजा काव्या

अल्पवर्षा और लगातार गिरते भूजल स्तर के कारण बुंदेलखंड को भीषण पेयजल संकट का सामना करना पड़ रहा है। कई इलाकों में तो भूजल स्तर गिरकर 55 मीटर तक नीचे चला गया है। ऐसे हालात में क्षेत्र की महिलाएं आगे आकर सूख रहे बुंदेलखंड की गोद को पानी से भरने का प्रयास कर रही हैं।

मध्य प्रदेश के छतरपुर-टीकमगढ़ के 54 गांवों में 1140 जल सहेलियों ने अब तक 50 से ज्यादा छोटे

बछेड़ी नदी 22 किलोमीटर इलाके में बहती है। इस इलाके में पिछले दो सालों में 2500 पौधों का रोपण किया जा चुका है।

तालाब बनाए हैं। 5000 पौधे रोपे, और बछेड़ी नदी, कुजान नदी को नया जीवन दिया। महिलाएं टूट चुके प्राचीन तालाब और लुप्त हो चुकी नदियों को फिर से जिंदा करने का सफल अभियान चला रही हैं। महिलाओं के ऐसे ही समूह उप्र के ललितपुर और झांसी जिलों में भी जलाशयों को संवारने के मिशन में जुटे हैं। इन महिलाओं को अब नया नाम जल सहेली मिल गया है।

नदी बचाने 22 किलोमीटर इलाके में रोपे पौधे

इस अभियान से जुड़े मानवेंद्र सिंह बताते हैं कि जल सहेलियों ने बड़ामलहरा की बछेड़ी नदी को नया जीवन दिया। यह नदी पूरी तरह सूख चुकी थी। अंगरोठा गांव में 107 मीटर लंबी नहर बनाकर सूख चुकी झील को भरने में महिलाओं ने सफलता हासिल की है। नदी के पास पौधरोपण का अभियान भी चलाया जा रहा है। बछेड़ी नदी 22 किलोमीटर इलाके में बहती है। इस इलाके में पिछले दो सालों में 2500 पौधों

महिलाएं टूट चुके प्राचीन तालाब और लुप्त हो चुकी नदियों को फिर से जिंदा करने का सफल अभियान चला रही हैं। इन महिलाओं को अब नया नाम 'जल सहेली' मिल गया है।



का रोपण किया जा चुका है।

इस अभियान में सरकार से नहीं ले रही कोई मदद

महिलाओं की ओर से जलाशयों को संवारने के लिए चलाए जा रहे इस

जल सहेलियों ने बड़ामलहरा की बछेड़ी नदी को नया जीवन दिया। यह नदी पूरी तरह सूख चुकी थी। अंगरोठा गांव में 107 मीटर लंबी नहर बनाकर सूख चुकी झील को भरने में महिलाओं ने सफलता हासिल की है।

- मानवेंद्र सिंह

अभियान में सरकार का कोई आर्थिक सहयोग नहीं है। महिलाएं श्रमदान से ही सारा काम कर रही हैं। महिलाओं से प्रेरित होकर कुछ किसान भी तालाबों की मिट्टी निकालकर अपने खेतों में डालते हैं। इससे तालाब गहरे हो जाते हैं किसानों को उपजाऊ मिट्टी मिल जाती है।

अनूठी पहल

भारत का पहला 'वर्टिकल फॉरेस्ट अपार्टमेंट'

‘माना फॉरेस्टा’ एक ऐसी आवासीय बहुमंजिला इमारत है, जो पत्तों, झाड़ियों, पेड़ों और लताओं से हर तरफ से सुसज्जित है

अर्कजा काव्या

कुछ महीनों पहले इस खबर के साथ प्रिंट और डिजिटल मीडिया में कई लेख आए कि बंगलुरु में भारत का पहला ‘वर्टिकल फॉरेस्ट अपार्टमेंट’ बना है। इसके साथ ही यह बहस भी चल पड़ी कि यह कोशिश क्या ऐसी है कि जिसे गंभीरता के साथ लिया जाए। पर ज्यादातर लेखकों-विशेषज्ञों की राय यही है कि यह न सिर्फ सामयिक दरकार पर खरी उतरनी वाली पहल है, बल्कि कई ऐसी चिंताओं से निपटने की दिशा में नवाचारी कदम भी है, जिससे शहर और वन का सहअस्तित्व बना रहेगा। जाहिर है कि यह पहल देश में अत्याधुनिक स्थापत्य की समझ को सैद्धांतिक और नीतिगत स्तर पर बदलने का दबाव डाल रही है।

ऐसा देखा गया है कि हम शहरों में अपनी दिनचर्या में से 90 फीसदी समय ऐसे घरों के अंदर रहकर बिताने को मजबूर होते हैं, जहां न तो ठीक से सूरज की रोशनी पहुंचती है और न ही स्वच्छ हवा आती है।

बंगलुरु के सरजापुर मुख्य सड़क पर ‘माना फॉरेस्टा’ नाम से खड़ा चौदह मंजिला ‘वर्टिकल फॉरेस्ट टावर’ एक ऐसी मिसाल बन गया है, जिसमें बहुत खूबसूरती के साथ वनस्पति विज्ञान, जैव निरंतरता और पर्यावरण का एक साथ समावेश करने की कोशिश की गई है। यह आवासीय परियोजना भारतीय शहरों में घरों को लेकर बनी परंपरागत धारणा में क्रांतिकारी बदलाव लाने की दिशा में तारीखी पहल साबित हो सकती है।

‘माना फॉरेस्टा’ एक ऐसी आवासीय बहुमंजिला इमारत है, जो पत्तों, झाड़ियों, पेड़ों और लताओं से हर तरफ से सुसज्जित है। यह अपार्टमेंट इस सोच के साथ बनाया गया है कि इंसान और प्रकृति को ज्यादा से ज्यादा एक-दूसरे के नजदीक लाया जा सके। आधुनिक युग में इन दोनों के बीच टूट चुके संबंधों के कारण परेशानियां इस कदर बढ़ गई हैं कि साल के कुछ महीनों में खासतौर पर लोग महानगरों से दूर पर्यावरण के लिहाज से बेहतर स्थान पर चले जाने को मजबूर हो रहे हैं।

ऐसा देखा गया है कि हम शहरों में अपनी दिनचर्या में से 90 फीसदी समय ऐसे घरों के अंदर रहकर बिताने को मजबूर होते हैं, जहां न तो ठीक से सूरज की रोशनी पहुंचती है और न ही स्वच्छ हवा आती है।



हरियाली तो दूर-दूर तक दिखाई नहीं पड़ती। यह बीमारियों को सीधे-सीधे न्योता तो है ही, इससे हमारे विचारों में भी नकारात्मकता पैदा होती है।

यह अपार्टमेंट इस सोच के साथ बनाया गया है कि इंसान और प्रकृति को ज्यादा से ज्यादा एक-दूसरे के नजदीक लाया जा सके।

‘माना फॉरेस्टा’ ने ऐसी तमाम समस्याओं से निजात का रास्ता दिखाया है, जो जीवन और प्रकृति को तो साथ-साथ लाता ही है, साथ ही इस तरह की आवासीय परियोजना शहरी जीवनशैली पर बड़े बदलाव का आकस्मिक बोझ भी नहीं डालती है।

ग्लेशियर

विकास और प्रकृति में सामंजस्य हो

पर्यावरण के नाम पर व्यावहारिक विकास को अक्सर बलि चढ़ते देखा गया है पर आवश्यक यह भी है की प्रकृति से छेड़छाड़ की सीमा निश्चित की जाए

राजी सिंह

गं गा जिन मूल धाराओं से मिलकर बनी है, उनमें से ऋषि गंगा और धौली गंगा ने 7 फरवरी को हिमनद जनित पानी, गाद, बर्फ और चट्टानों के मलबे के भयानक कहर को झेला है। हालांकि ग्लेशियर जनित बाढ़ का सही-सही कारण अभी पता नहीं चल पाया है, परंतु सर्दी में जब हिमनद ज्यादा स्थिर होते हैं, बर्फ का पिघलना भी कम होता है, ऐसी परिस्थितियों में ग्लेशियर का टूटना और साथ में इतना सारा पानी नदी में एक साथ आ जाना भूवैज्ञानिकों के लिए भी पहेली बना हुआ है। लेकिन ऐसी घटनाएं ग्लेशियर में विशेषकर हिमालयी क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से असंभव नहीं हैं। चमोली आपदा के बाद से ही कई प्रश्न पैदा हो रहे हैं। हिमालय क्षेत्र में चल रही विकास परियोजनाओं से लेकर बढ़ रही मानव गतिविधियों तक सब कटघरे में हैं। सात वर्ष पहले घटी केदारनाथ त्रासदी को भी याद किया जा रहा है और उसके बावजूद भी जारी प्रकृति से छेड़छाड़ के षड्यंत्र का बही खाता बहस का विषय बना हुआ है। प्रश्न किए जा रहे हैं कि हिमस्खलन और भूस्खलन के खतरे को जानते समझते हुए भी ऐसी जगह पर पनबिजली की परियोजनाओं को अनुमति कैसे मिल गई। कुछ प्रश्न विशुद्ध राजनीतिक हैं, तो कुछ प्रशासनिक भूल-भुलैया से संबंधित हैं। कुछ प्रश्नों में पहाड़ों, नदियों और वनों जैसी प्राकृतिक विरासतों की क्षति की चिंता है और जानमाल की स्थाई हानि का भय भी है। विकास करते हुए सावधानी किस स्तर तक रखी जाए, यह भी बहस का विषय है। एक पक्ष जिसे विकास कहता है, दूसरा उसे विनाश बताता है। यह पक्ष पहाड़ी क्षेत्रों में वनों को काटकर हो रहे निर्माण की तुलना कंक्रीट के जंगल से करता है। इनके निशाने पर सबसे ज्यादा इन क्षेत्रों में बन रहे बांध रहते हैं। फरवरी माह में बांध विरोधी आंदोलन के 100 वर्ष पूरे हो गए हैं।

1920 के दशक में सर्वप्रथम पश्चिमी महाराष्ट्र में मूला-मूठा नदी के संगम पर बन रहे मूलशी बांध का

हिमालय क्षेत्र के वायु तापमान में औसत रूप से 1.1 डिग्री सेल्सियस प्रति 100 वर्ष की वृद्धि हुई है। शीतकाल में इसकी दर 1.2 डिग्री हो जाती है।

विरोध किया गया था। चमोली के दर्दनाक हादसे के बाद देश में बांधों को लेकर विरोधी स्वर एक बार फिर मुखर हो उठे हैं। बांध समर्थक तर्क देते हैं कि बांधों से उन स्थानों पर पानी पहुंचाना संभव होता है, जहां उसकी प्राकृतिक उपलब्धता कम होती है। दूसरा लाभ बिजली उत्पादन का है जो दुर्गम क्षेत्रों में आर्थिक स्वावलंबन और स्थानीय रोजगार को प्रोत्साहित करने में सहायक सिद्ध होता है। यदि बांध विकास के लिए आवश्यक है तो फिर उनका विरोध क्यों होता है। हिमालय क्षेत्र की अधिकांश त्रासदियों के लिए पनबिजली परियोजनाओं के लिए बने बांधों को ही उत्तरदायी ठहराया गया है। इस बार भी कहा जा रहा है कि ऋषि गंगा और तपोवन विष्णु परियोजना के बैराज ग्लेशियर की राह की रुकावट ना बनते



तो मलबा बिना किसी को हानि पहुंचाए सीधे गंगा सागर तक निकल जाता।

सच क्या है, इस बारे में अलग अलग राय हो सकती है, लेकिन इस पर सब एक मत हैं कि विकास और विनाश के बीच की महीन रेखा की सही पहचान अब आवश्यक हो गई है। विकास के नाम पर प्रकृति से छेड़छाड़ की सीमा निश्चित हो, साथ ही इसका भी ध्यान रखा जाए कि व्यावहारिक विकास भी पर्यावरण अतिवाद की बलि न चढ़ जाए। ऋषि गंगा की त्रासदी के बाद पर्यावरण बनाम विकास का सवाल सिर उठाए खड़ा है। साथ ही स्थानीय निवासियों को इन परियोजनाओं से होने वाले लाभ और हानि का भी विषय चर्चा में है। ऋषि गंगा और धौली गंगा के इस क्षेत्र में वर्ष 1970 में इससे भी बड़ी जलप्रलय आई थी। यहां इस घाटी में यह दूसरी बड़ी आपदा है। उस समय के मुकाबले इस बार अधिक हानि हुई है। क्योंकि तब हमने विकास के रूप में प्रकृति को चुनौती नहीं दी थी। विकास जरूरी है, मगर प्रकृति के साथ सामंजस्य बना कर। प्राकृतिक सामंजस्य को विकास के हर मोर्चे पर चुनौती मिल रही है। जिसका परिणाम हम प्राकृतिक आपदाओं के रूप में चुका रहे हैं।

हिमालय में इस तरह की त्रासदियों का लंबा इतिहास है। मगर अब इन विप्लवों की बारंबरता बढ़ रही है। पिछले कुछ वर्षों में हिमालय में पानी और भूगर्भीय जनित आपदाओं में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इसके मूल में हिमालय की अपनी प्रकृति और पहाड़ों के प्रति उपभोक्तावादी दृष्टिकोण है जो जलवायु परिवर्तन के दौर में और भी विकराल रूप लेता जा रहा है। हिमालय उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव की तरह बर्फ का सबसे बड़ा केंद्र है। इस दृष्टि से इसे तीसरे ध्रुव और विश्व के जलस्तंभ का दर्जा प्राप्त है। यह विशाल हिमालय शृंखला काफी सीमा तक कमजोर संरचना है। यह पर्वत

शृंखला अभी भी विकासमान स्थिति में है। प्रत्येक वर्ष भूगर्भीय हलचल के कारण तनाव में है, यह न केवल उत्तर दिशा में कुछ मिलीमीटर की दर से खिसक रही है, अपितु ऊंची भी हो रही है। यह भूकंप से सर्वाधिक प्रभावित है। भूगर्भशास्त्रियों के अनुसार, इस कारण हिमालय में बर्फ का तूफान, हिमस्खलन, हिमनद का टूटना, ऊंचाई पर कमजोर अस्थायी झीलों का बनना, तीखी ढलान वाली नदी और भूगर्भीय हलचल सब सामान्य सी प्रक्रिया है। हिमालय क्षेत्र को जलवायु परिवर्तन व्यापक रूप से प्रभावित एवं नियंत्रित करता है। इसका प्रभाव यहां स्थित हिमानियों, हिम निर्मित तालाबों तथा चट्टानों और धरती पर पड़ता रहता है। हिमालय क्षेत्रों में वनों की कटाई निरंतर हो रही है। पर्यटन और तीर्थाटन के नाम पर हिमालय पर उमड़ रही मनुष्य और वाहनों की अनियंत्रित भीड़ भी संकट को बढ़ा रही है। हिमालय पर्वत नवीन पर्वत शृंखला है। यह पर्यावरण की दृष्टि से सबसे संवेदनशील पर्वत है। इसलिए यहां की पारिस्थितिकी में परिवर्तन के प्रति दृष्टिकोण भी संवेदनशील रखना होगा। ऐसा कोई भी निर्माण जो इसे प्रदूषित कर सकता हो, वह यहां की जलवायु में परिवर्तन लाएगा, जिससे ग्लेशियर पिघलने, भारी वर्षा और भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि होगी।

चमोली त्रासदी के केंद्र में रहे नंदा देवी क्षेत्र के आठ ग्लेशियर पिछले तीन दशकों में 10% तक पिघल चुके हैं और कहीं कहीं तो ये 30% भी हुआ है।

हिमालय क्षेत्र के वायु तापमान में औसत रूप से 1.1 डिग्री सेल्सियस प्रति 100 वर्ष की वृद्धि हुई है। शीतकाल में इसकी दर 1.2 डिग्री हो जाती है। कुछ वर्षों से यहां हिमपात की मात्रा तथा दर में कमी आई है। जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियर्स सिकुड़ रहे हैं। चमोली त्रासदी के केंद्र में रहे नंदा देवी क्षेत्र के आठ ग्लेशियर पिछले तीन दशकों में 10% तक पिघल चुके हैं और कहीं कहीं तो यह आंकड़ा 30% का है। पिघलते और सिकुड़ते हुए ग्लेशियर के कारण वहां पर नए क्षेत्र विकसित हो जाते हैं। ये क्षेत्र बहुत संवेदनशील या क्षणभंगुर होते हैं। इनके टूटने से मलबा जल्दी बनता है। ज्यादा हिमपात या हिमस्खलन से ये पूरा भूभाग नीचे घाटी की तरफ खिसक जाता है। कई बार ये मलबा नदी के बहाव को अवरुद्ध कर देता है, जिससे एक विशालकाय झील बन जाती है। जब भारी वर्षा के बाद यह झील टूटती है, तो भारी तबाही मचाती है। यही सब केदारनाथ में हुआ था और ऐसा ही अब चमोली में हुआ है।

हिमालय कुल 5.95 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इस क्षेत्र में लगभग 10,000 ग्लेशियर हैं। सैंकड़ों झीलें भी ग्लेशियर पर बनती और टूटती रहती हैं। यह प्राकृतिक प्रक्रिया है। ये घटनाएं पहले भी होती थीं और भविष्य में भी होंगी। ग्लेशियर झीलों को फटने से नहीं रोका जा सकता। लेकिन हम इन घटनाओं के लिए स्वयं को तैयार कर सकते हैं। इसके लिए हमें तीन मोर्चों पर एक साथ काम करना चाहिए। निगरानी-अध्ययन, योजना बनाना और आपदा न्यूनीकरण। जैसे विकास के लिए पनबिजली परियोजनाएं आवश्यक हैं, सिर्फ ध्यान यह रखना होगा कि जब भी कोई पनबिजली परियोजना ऊंचे हिमालय क्षेत्र में प्रस्तावित हो, तो ग्लेशियर का अध्ययन भी उसमें शामिल किया जाए। जिन ग्लेशियरों पर परियोजनाएं बन रही हैं, उनकी निगरानी प्रमुखता से हो। वहां कितनी ग्लेशियर झीलें हैं, वे कितनी संवेदनशील हैं, हिमपात की स्थिति क्या रहती है, ग्लेशियरों के मुहाने या आस पास कितना मलबा जमा है, इत्यादि। सभी ग्लेशियरों का बारीकी से अध्ययन संभव नहीं है। फिर भी अधिकतर जगह रिमोट सेंसर लगाए जा सकते हैं। हिमालयी क्षेत्रों में झीलों और हिमनदों के विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है। इसके लिए हिमालय राज्यों में अधिक से अधिक सब मौसम स्टेशन और निगरानी स्टेशनों को स्थापित करने की आवश्यकता है ताकि आपदाओं का पूर्व आकलन किया जा सके और आपदा से होने वाले नुकसान और दुष्परिणामों को भी कम किया जा सके। पनबिजली परियोजनाओं के लिए किए जा रहे अध्ययनों का दायरा आर्थिक मुआवजे से आगे बढ़ाकर संबंधित क्षेत्र की सामाजिक-सांस्कृतिक और पर्यावरण से संबंधित विशेषताओं को सहेजने तक बढ़ाया जाए। हिमालय क्षेत्रों में झीलों और ग्लेशियरों के और अधिक विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है। ग्लेशियरों के साथ कोई भी छेड़छाड़ देश के

पर्यावरणीय, सामाजिक, आर्थिक और सामरिक संकट का कारक बन सकती है। हिमालय क्षेत्र में 10,000 से ज्यादा छोटे बड़े ग्लेशियर हैं। लेकिन चौंकाने वाली जानकारी यह है कि इनमें से केवल उत्तराखंड के पांच और लद्दाख के एक ग्लेशियर की ही नियमित रूप से निगरानी हो रही है। स्पष्ट है कि निगरानी के लिए संसाधन बढ़ाने की आवश्यकता है, ताकि पहाड़ों में हो रहे छोटे से परिवर्तन पर भी नजर रखी जा सके।

जब अध्ययनों की रिपोर्ट के द्वारा सब डेटा एकत्रित कर लिए जाएं, तो तब तय किया जाए कि संबंधित क्षेत्र में परियोजनाओं का निर्माण किया जाना चाहिए या नहीं। या फिर किन सुरक्षा उपायों के साथ परियोजना शुरू की जा सकती है। माना बड़े बांध विकास और रोजगार के प्रमुख स्रोत हैं, लेकिन यदि वे पहाड़ों को खोखला कर रहे हैं, तो उनकी जगह छोटे छोटे बांधों को प्राथमिकता दी जा सकती है। अत्यधिक संवेदनशील क्षेत्रों में विकल्प के तौर पर सौर ऊर्जा को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। तीसरा चरण है आपदा न्यूनीकरण। इसके अंतर्गत ग्लेशियर झीलों को वैज्ञानिक तकनीक से पंक्चर किया जा सकता है। सामान्य ढंग से ग्लेशियर झील के मुहाने को हल्का सा खोला जा सकता है। क्योंकि झील फटने के समय पानी से उतना नुकसान नहीं होता, जितना उसके साथ बह कर आए मलबे से होता है।

वैश्विक तापमान में वृद्धि होने के कारण समस्त विश्व में ग्लेशियर यानी हिमनद पिघल रहे हैं। यह मानवता के सामने बड़ी चुनौती है। पाया गया है कि हिमालय पर्वत शृंखला के उन क्षेत्रों में ही ग्लेशियर ज्यादा प्रभावित

5.95 लाख वर्ग किलोमीटर में फैले हिमालय में लगभग 10,000 ग्लेशियर हैं। सैंकड़ों झीलें भी ग्लेशियर पर बनती और बिखरती रहती हैं जो कि एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। ग्लेशियर झीलों को फटने से नहीं रोका जा सकता।

हुए हैं, जहां मानव की गतिविधियां बढ़ी हैं। ग्लेशियर हमारी सभ्यता का आधार हैं। ये हमेशा सामान्य स्थिति में रहे, तब ही विकास को बल मिलेगा। इनका असामान्य व्यवहार मानव सभ्यता के लिए घातक है। समय आ गया है कि हिमालय क्षेत्र से बाहर भी वैश्विक तापमान को बढ़ाने वाली गतिविधियों को नियंत्रित किया जाए। पहाड़ों को बचाने का दायित्व सिर्फ सरकार या स्थानीय निवासियों का ही नहीं है। हिमालय देश की सुरक्षा के लिए आवश्यक है। हिमालय सुरक्षित, देश सुरक्षित। इसलिए इसकी सुरक्षा प्रत्येक देशवासी के लिए आवश्यक है और उसका दायित्व है। हम सब को ध्यान रखना चाहिए कि जब कभी हम पर्यटन या तीर्थाटन के लिए पहाड़ों पर जाएं, तो वहां पर प्लास्टिक या अन्य कचरा न फैलाएं।

SUSTAINABLE DEVELOPMENT

INDIA HAS BEEN WALKING THE TALK

HISTORICALLY, INDIA'S CONTRIBUTION TO WORLD EMISSIONS HAS BEEN AROUND 3%. EVEN TODAY INDIA'S LOAD IS ONLY 6% OF THE WORLD EMISSION

PRAKASH JAVADEKAR

CLIMATE CHANGE, ENVIRONMENT and sustainable development are amongst the most important issues of our times that need not only discussion but dedicated action by countries world over. Countries across the globe are vulnerable to the environmental impact of climate change, and that this may adversely affect the realization of their true development potential.

It is not one country alone that can make

Human induced activities, primarily by the industrialized countries, have resulted in increasing the concentration of greenhouse gases (GHGs) which in turn trap extra heat and increase Earth's average temperature leading to climate change.

a difference, but strong collective efforts and commitment by all the countries across the globe in this direction can help us adapt and mitigate the adverse effects of Climate Change.

The antropogenic (human induced) activities, especially burning of fossil fuels, primarily by the industrialized countries have resulted in increasing the concentration of greenhouse gases (GHGs) which in turn trap extra heat and increase Earth's average temperature leading to climate change.



World has been battling the menace created by emissions since the industrial revolution which dates back to the 18th century.

Historically, India's contribution to world emissions has been around 3%. Even today India's emission load is only 6% of the world emission. If we look at the per capita load in India, it is 1.96 tonnes CO₂ equivalent which is less than one third of the world's per capita GHG emissions, which is 6.55 tonnes of CO₂ equivalent. Despite not being a part of the problem, India over the years has taken significant steps towards climate change and today India leads Climate Action.

Climate change features prominently within the environmental and economic policy agendas of India. India has been walking its talk on Climate Change and is 2-degree compliant in action and contribution. In keeping with the Paris Agreement, it was decided that the temperature rise will be restricted to 2 degrees by 2100 and for that India and other countries declared the nationally determined contribution.

It was also declared that emission intensity will be reduced by 35% and that India will have 100 GW of solar power and 175 GW renewable power by 2022. Today, India has already installed 89 GW of renewable energy and if one includes nuclear power and large hydro the total installed capacity comes out to be 136 GW which is nearly 36% of our current installed capacity. Now, Prime Minister Modi has raised the bar and taken this goal to 450 GW by 2030.

Over the years, India has taken significant steps towards climate change. One of the major achievements is that our emissions intensity has reduced by 21%, thereby achieving our pre-2020 voluntary target and India is well on course to achieve more than what we committed by 2030.

Green cover in India has increased by 15,000 square kilometres in the last 6 years, which is a huge development for a country like India which despite its resource constraints, having to cater to nearly 18% of World Human and Cattle Population both, has a thriving 8 percent of world's biodiversity.

Every action in renewable direction makes India greener and reflects the commitment to cleaner action and climate change. Today, India is working on the Hydrogen Mission which was announced in the budget recently.

Not only nationally but even at world stage India is leading by example. International Solar Alliance (ISA), launched in 2015, is Prime Minister's vision to bring clean and affordable energy within reach of all, and enhance international collaboration with countries having solar potential. Today, 89 member countries have signed the Framework Agreement of ISA with 72 of them having ratified.

India has shown the World how to match words with commensurate actions, how to face the inconvenient truth of Climate

and processes. The countries that have innovated the required technology need to make it available at an affordable cost

India has taken significant steps towards climate change. One of the major achievements is that our emissions intensity has reduced by 21%, thereby achieving our pre-2020 voluntary target.

Change with convenient and committed actions. Now, it is for the World to emulate India and take leaf and act in compliance with Paris Agreement, as that is the need of the hour. The two most important issues which the developed countries must address immediately are



technology and finance.

Developed countries need to do their part as envisaged under UNFCCC and its Paris Agreement, for extending financial and technological support to developing countries. The promise of USD 1 trillion by 2020 has not been fulfilled so far.

The other is appropriate technologies at affordable cost. Every climate action comes with a cost and that cost is ultimately borne by poor of the country. The cost is a significant barrier in bringing about the crucial changes and towards transition to greener and cleaner products

so that the technology can be adopted by more and more countries and industries. If we consider the Climate Crisis as a disaster, then nobody should be making profits from a disaster.

In Paris Agreement India played the role of global leader and Prime Minister Modi facilitated the Paris Agreement and introduced lifestyle and climate justice as more important issues in the overall debate of Climate Change and that is why they were included in the preamble of Paris Agreement.

India has taken significant steps for combating Climate Change and will continue to take affirmative Climate Actions in the future also under the visionary leadership of Prime Minister Narendra Modi not just for ourselves but also for the World in line with "Vasudhaiva Kutumbakam".

India's Vaccine Maitri during COVID-19 pandemic has shown the way forward to tackle a problem of global magnitude and that is, the power of our collective wisdom, spirit and action. We need to take forward the same approach for tackling the menace of Climate Change and secure a Green Earth for our future.

(Author is Union Minister for Environment, Forest and Climate Change, Government of India)

गंगे च यमुने प्रकृति संरक्षण यात्रा

AN OBEISANCE TO MOTHER EARTH

THOUGH BOTH GANGA AND YAMUNA ARE REVERRED AS MOST SACRED RIVERS, THEY ARE STRUGGLING TO SURVIVE DUE TO APATHY OF MANKIND

SUBHI VISHWAKARMA

Ganga is one of the oldest and most sacred rivers but it is in extreme danger with ever increasing pollution and its self-treating bacteria Bacteriophages are also unable to do the cure at some places. Its water is not suitable for normal usage as well. The glacier which fills the Ganga doab is also on the verge of extinction and is estimated to last till 2030 only. It is high time to realize that mere enactment of laws and constitution of commissions will not get us the solution. Yes, the intent and efforts made by गंगे च यमुने प्रकृति संरक्षण यात्रा surely seems to have dented the pollution and promises to bring about the desired change.

Yamuna is no less sacred than Ganga but both are facing unprecedented problem vis-a-vis the sewage effluence discharge in and around Delhi.

The lockdown gave us hope that the mankind can also be helpful then just being harmful to the nature and water bodies.

While the Ganga Yatra began from Shukirth on Feb 25, 2021 and went up to Anup Shahr (Mastram Ghat), the Yamuna Yatra started from Hathinikund on March 6, 2021 and went up to Narora (Wasi Ghat); and both Ganga and Ya-



munia Yatra merged on March 17, 2021.

Amidst chants and exhortations to save two sacred rivers, the two yatras are receiving widespread support and concern from all the sections of the society irrespective of religious affiliations. People in general are enthusiastic about the need and relevance of preserving the two sacred rivers and Nature.

Researches have found crocodiles helpful for saving rivers. So, saving crocodile means saving rivers which in turn means saving biodiversity. If the glacier becomes extinct, Ganga will only be fed by rain water and that is a huge threat. Rivers are considered cradle of civilizations and hence mothers & live givers to the humans as well as animals. And if they begin to die, the very existence of mankind would be threatened.

We should not just rely on the governmental efforts to save Nature. Instead, we should get out of comfort zone and strive to work for Mother Nature and pledge neither to pollute the rivers nor to let people do so.

Mother Nature has given us profusely and now it is our turn to pay back. Our volunteers from Paryavaran Sanrakshan Gatividhi's Meerut initiated this movement to save our Mother Nature from getting polluted. Thus, these yatras were aimed at exhorting people to join hands for Mother Earth and sensitizing people about environmental hazards caused largely by our apathy towards Nature which is threatening the very existence of mankind. People in large numbers joined the two yatras.

AMRITSAR

HOSPITAL FOR TREES

JUST LIKE HUMANS, PLANTS ALSO HAVE LIFE. THEY BREATHE, POSSESS NERVOUS SYSTEM AND ADOPT THEMSELVES DIFFERENTLY IN DIFFERENT ENVIRONMENTS

LOVELY KUMARI

IT IS EASY to feel helpless amidst the news of alarming global warming, but small steps taken by us can have a huge impact on biodiversity conservation.

Amritsar-based Rohit Mehra, an IRS Officer, has started world's first Tree & Plants Hospital & Ambulance service at Amritsar on February 21, 2021. This unprecedented move has been taken to

Ambulance is being provided for Plants in Amritsar

preserve eco-friendly environment.

Apart from this, a brand new ambulance service known as "Tree Ambulance" is also being provided to plants for their better or instant treatment. In this regard, clinic will treat the ill and diseased plant, so that they again survive and flourish.

According to Indian ethology, humans are hostile in nature. Just like humans, plants also have life, they breathe, and famous biologist, physicist and botanist Sir Jagadish Chandra Bose have also mentioned that plants possess nervous system and like humans, plants adopt themselves differently in different

Have you ever heard of availability of an Ambulance is being provided to plant and take off them immediately to plant hospital for their instant treatment? Is not it sound bizarre?

environments or situation which help them to survive or communicate too, but we human can't just notice it.

'Plants also fall ill and they also need treatment. For making clear and clean environment, we are making such Tree hospital for plants and trees, so that people can come here and address their problem regarding plants', said, Rohit Mehra.

The world's first Tree hospital is currently providing more than 33 services including, deposing the tree, pick up a broken piece of plants or trees and re-planting it,



de-escalating tree's root from wall and in future they might provide many more services to people.

Rohit Mehra further stated that, the whole practice has been conducted on the basis of Vriksh shastra Book. According to this book, there are several tips or suggestions mentioned on how to keep plants alive or saving their life. All the practices have been conducted on the basis of this ethological Vriksh Shastra.

The newly launched Tree Hospital at Amritsar is an unprecedented move, taken to provide people an eco-friendly environment.

Even in the modern era, it is universally accepted that all plants have a nervous system responsible for gathering information from their environment response for their survival and growth and found to be associated with the most vital functions of plants like respiration, photosynthesis, light & gravity tropism, transport through phloem and plant defense. The idea behind this start up is really unprecedented in the environmental sector.



We humans as species depend on plants for our very existence but we never pay much attention on them while doing other stuff of our daily life. We are not safeguarding it nor protecting it for balancing the ecosystem. But we need to take a step regarding preserving our environment and taking this kind of initiation should be taken more often to save our mother nature.



ENVIRONMENTAL LAWS

PERSONIFYING NATURE

THE 1976 CONSTITUTIONAL AMENDMENT RULED THAT THE STATE & CITIZENS ARE EQUALLY DUTY-BOUND TO PROTECT FORESTS, WILDLIFE & ECOSYSTEMS

GOURI JOSHI

THE AGE-OLD PHILOSOPHY of 'Advaita' considers 'self' as one with 'other' - 'human beings' as part of this 'earth'. This thought is most relevant when it is applied to nature conservation. The philosophy advocates respect for every biotic and abiotic component of the earth, with a belief that the atoms and molecules of matter are one. This philosophy might have triggered the personification of rivers, birds, and plants in the traditional Indian knowledge system. The quest for treating all life forms at par with humans must have also given birth to different animal deities worshiped in India. Vasudhaiva Kutumbakam – a philosophy that reflects as an antecedent to various modern theories such as 'Gaia theory', 'one earth theory', and 'interconnected ecosystems theory'. Ecological connectivity and living in harmony with nature is now becoming a mainstream thought for 'nature conservation'.

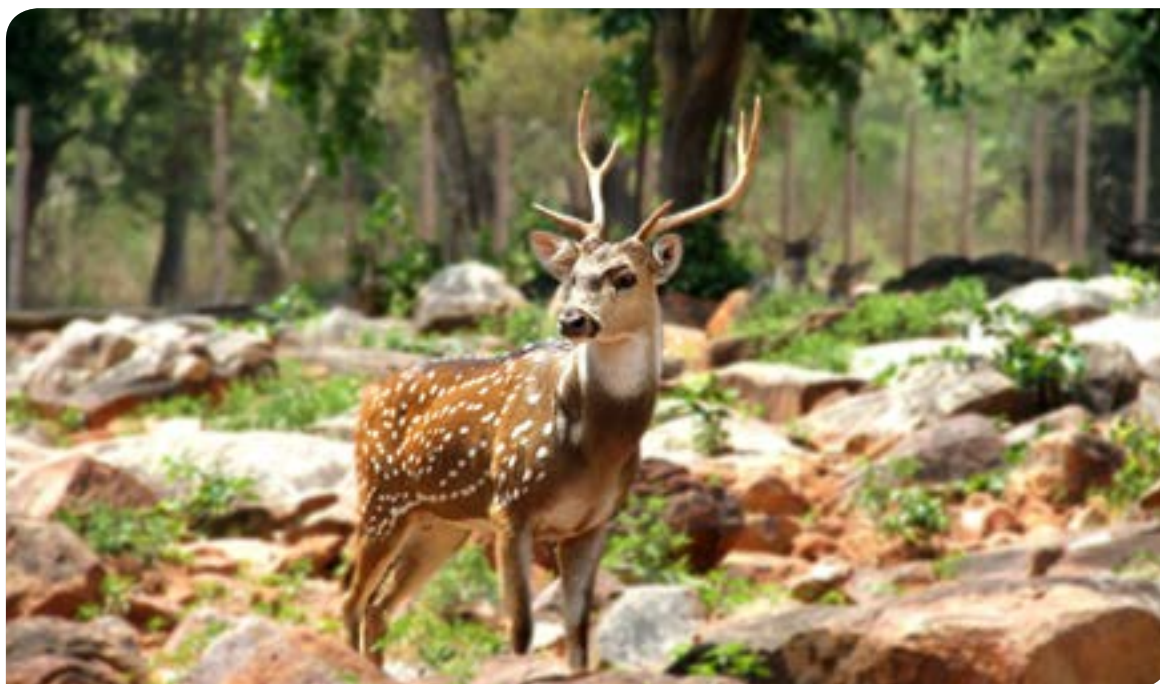
The modern democratic world is governed through economic concerns, command & control strategies, and laws. Policies, strategies, action-plans, laws, rules, and regulations are the primary tools of governance. Society can accept and implement laws only when there is communication, education, and public awareness (CEPA).

अयं बंधुरयंनेति गणना लघु चेतसाम्
उदर्चारितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

(Those who are ignorant, they do distinction between mine and others; And those of noble conduct consider the whole world as one family)

-Mantra VI-72, Maha Upanishad

Before the 42nd Constitutional Amendment, the subject of nature conservation was administered through laws that were enacted to govern the land, land-use change, water distribution, irrigation, and forest management. 1970 onwards world started discussing the ramifications of environmental degradation and collective efforts the world





should take. This development triggered the enactment of various frameworks to prevent and control India's environmental degradation. Indian Constitutional

Amendment of 1976 established that the state and citizens are equally duty-bound to protect forests, wildlife, and ecosystems. We generally are aware of our rights but we also will have to be vigilant about our duties towards society and our nation. It is pertinent to note that violation of environmental laws is a criminal offense which means if we are not following the prescriptions given by environmental laws we can be punished with imprisonment or fine or both.

'Environmental law' is a generic term that is used in India to identify the group of laws that useful for the prevention and control of pollution and preservation of ecosystems that are notified. Laws convenient for the protection of ecosystems are the Indian Forest Act, 1927, the Wild Life (Protection) Act, 1972, the Forest (Conservation) Act, 1980, and the Biological Diversity Act, 2002. These laws have provisions to notify different types of areas wherein specific prohibitions or restrictions are imposed on human activities. These laws intend to preserve, protect and restore the ecosystems so that citizens can perpetually

enjoy ecosystem services.

The Water (Prevention and Control of Pollution) Act, 1972, the Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981, the Environment (Protection) Act, 1986 and various notifications and rules established under the Environment (Protection) Act, 1986 (EPA) work in furtherance to prevention and control of pollution. Currently, most of these laws are concentrating on the prevention and control of pollution

claimed thousands of lives of innocent Indian citizens. This incident forced the legislature to take a holistic approach towards protecting the environment. Today all the eligible development activities have to assess and address the environmental impacts that may occur due to development. Various rules have been established for the management and appropriate disposal of different types of waste such as biomedical waste, municipal solid waste, construction & demolition waste, hazardous waste, and e-waste.

Unless we the citizens become more aware, compliant, and demand the enforcement of our laws of land, the 'Swatch Bharat' goal can't be achieved.

done or apprehended to be done by the commercial organisation. The EPA is considered to be umbrella legislation, as this law has the potential to deal with every problem associated with environmental degradation. The term 'environment' as per EPA includes water, air, and land and the inter-relationship which exists among and between water, air and land, and human beings, other living creatures, plants, micro-organism, and property.

These rules now demand that we should segregate our waste at source and should share the responsibility for its appropriate disposal with the government.

Even though stringent laws have been enacted by the Parliament, we need to understand that unless we the citizens of this country become more aware, compliant, and demanding for the enforcement of these laws, the ultimate result of 'Swatch Bharat' can't be achieved.

In December 1984 Bhopal Gas tragedy



PASSION

LEADING BY EXAMPLE

18-YR- OLD NANDINI, A CLIMATE ACTIVIST AND SOCIAL WORKER, IS PASSIONATE ABOUT TRANSFORMING HER THOUGHT INTO A REALITY BY WORKING ON GROUND

SUBHI VISHWAKARMA

MEET NANDANI DIXIT an 18-year-old enthusiast who might be seen wearing cool dresses and spending time on social media but has shown tremendous commitment for the saving Nature. Nandini is a climate activist and a social worker who is passionate about transforming her thought into a reality by working on ground than just playing on people's minds.



She found that humans' lifestyle is basically to blame for all the ills that plague our society and no government or laws can change the scenario. Since the problem is created by us, human beings alone can cure them.

Nandini created a small forest as a token of respect to the Kargil martyrs, and started a campaign *Ek Pedh Shahidon Ke Naam* wherein people plant trees every month from 19th to 25th.

Nandini started a small forest named "Amod Aranya" on July 26, 2019 as a tribute to the Kargil martyrs. Since then they have been planting trees on abandoned piece of land which is craving to go green. With little help from us, she created a small forest as a token of respect to the martyrs of Kargil war, and started a campaign by the name of *Ek Pedh Shahidon Ke Naam* wherein people plant trees every month from 19th to 25th. This step may appear to be naive and small but good enough to create huge difference to the cause of Nature, and both present and future generations.

Besides, Nandini is making other efforts also including preparing a safe zone for our surviving soldiers, besides working as a Paryavaran Prahari and running an awareness campaign against plastic under *Ghar Ka Plastic Ghar Me*, whereby people are asked to avoid the plastic waste disposal outside their homes and instead make an eco-brick.

Youngsters of her age group can create a difference by bringing the change and lead the society towards a clean, green and liveable world.



BENGALURU

CHILD IS FATHER OF THE MAN

RISHABH PRASHOBH, A CLASS IX STUDENT OF NATIONAL ACADEMY FOR LEARNING, BENGALURU, IS ESTIMATED TO HAVE SAVED 70 LAKH LITRES OF WATER IN A YEAR

 PARYAVARAN TEAM

WE FACE AN unprecedented scarcity of water due to population explosion. And, we expect our 30 cities to have 'high risk' ranking by 2050. Every summer we face the water crisis and we normally settle down by criticising the system or their mechanism.

A class IX student of National Academy for Learning, Bengaluru, Rishabh Prashobh



(14), has launched the Jal Mission and estimated to have saved 70 lakh litres of water in a year.

Rishabh came out with a brilliant idea of Aerators which work as small mechanical device that can be fitted into water taps, inside the spout. It mixes air with the water and ensures there is a consistent flow of water through the tap, without any fluctuations caused by a change in pressure. Aerators can cut the flow by more than half, and a tape which normally

supplies 15 litres of water per minute, gets reduced to six litres per minute. These devices can save up to 1,274 litres of water a month. Rishabh worked on this idea and got a school project which took almost three months to complete. This project promised to bring about the much sought after change.

In July 2019, Rishabh installed one in his grandmother's home in Bengaluru to test if Aerators would work. Within one month of implementation, he noticed a 30% drop in his grandmother's water bill. Earlier the bill was around Rs 340, but the rate dropped to around Rs 250. And this was the beginning of his fanciful idea clicking through. He persuaded his society members to go for the same device. And the result was quite positive which enabled them to save approximately 20 lakh litres of water.

By August 2019, Rishabh approached two Marriott hotels in Cochin, Kerala and presented his idea to the General Manager of the hotel. The manager agreed and fitted the Aerators at his hotel and now they collectively save around 50 lakh litres of water. Rishabh also presented the same idea to his school principal. Buoyed by his success, he approached Ms Indira Jayakrishnan of National Academy For Learning. She was also impressed by the idea. In 2017, she had introduced a "Green NAFL" initiative to encourage students to save electricity, paper, and grow indoor plants in their classrooms and common areas. Her school also decided to implement Rishabh's

Rishabh installed Aerator in his grandmother's home in Bengaluru to test if it works. Within a month, a 30% drop in his grandmother's water bill was noticed.

idea. Though the school could not measure the change as it remained closed due to COVID-19, they did get excited about how a little class project could lead to a change.

Such novel ideas by school boy like Rishabh can play the role of eco-warriors, set an example to save our nature and water bodies and lead his peers by example.

TAMIL NADU

PROTECTING MOTHER EARTH

A LIVING LEGEND FROM TAMIL NADU, MARIMUTHU YOGNATHAN, THOUGH A BUS CONDUCTOR NOW HAS BEEN CHAMPIONING THE CAUSE OF ENVIRONMENT SINCE HE WAS IN CLASS VIII

PARYAVARAN TEAM

RARE IS THE case when you meet someone who has dedicated 30 years of his life serving nature, who has planted around 3 lakh plants, has visited around 4000 universities and many thousand schools raising environmental awareness. The most inspiring aspect of this this unbelievable effort is that he is a bus conductor in Coimbatore...!!

Meet Marimuthu Yognathan, bus conductor, Tamil Nadu state transport corporation who is an eco activist and is fighting for the life of trees since he was in standard eighth, where he fought a war against timber mafia in Nilgiris.

Yognathan has been awarded “Eco Warrior” award by Hon’ble Vice-President of India, ‘Unsung Hero’ award by wild life film maker Mr. Mike Pandey and film actor Mr. John Abraham in “Timberland”



function held in Delhi, “Real Hero” award by CNN-IBN at Mumbai, Tamil Nadu Government has conferred on him the title ‘Sutru Suzal Seyal Veerar’. He was the recipient of the Eco Warrior Award conferred by the Indian Government.

“Eco Warrior” by Hon’ble Vice President of India, ‘Unsung Hero’ by wild-life film maker Mike Pandey and Bollywood actor John Abraham, “Real Hero” by CNN-IBN and finally ‘Sutru Suzal Seyal Veerar’ by Tamil Nadu government are few jewels that crown Marimuthu Yognathan, now known as Tree Man across the country.

Yes, you read correct. He was just in class 8th when he started planting trees. He could manage to study till standard 12th only, as he was not good in studies but if it included something about nature, he could grasp it at once and this passion made him our TREE MAN.

He lost his father at a very young age and then shifted to Kotagiri with his mother where he became closely associated with green activist Jayachandran of Tamil Nadu Green Movement, and his association with him only increased his interest in nature conservation. He avidly gobbled up information on flora and fauna, which he now shares with the children he meets in schools. He would ask a child to plant a sapling, and then will name the plant after that child. He did it purposely so that the planter-boy treats the sapling as his sibling and takes care for ever. The boy to treat the sapling as his sibling and give it water daily”. By these tiny and touching efforts he is not only creating awareness but is also generating an eco-warrior amongst each little one out there.

Environment

Being a bus conductor, it is difficult to find time but Yognathan is managing by working very hard on his on Mondays, his weekly off-day. He would most likely be attending a tree planting programme, or an awareness drive in some school, college etc. in the state.

Yognathan is doing all the environmental work with his modest salary. As a tribute to Yognathan, let us take a bow and salute. People like Yognathan is rare and surely our saviour. If we could do even one tenth of what they do, we could achieve our goal of saving the Mother Nature.

Let us pray that each state just like Tamil Nadu can have their Yognathan or their TREE MAN so that our mother could be protected.



KUMBH @HARIDWAR

DECLARING NO-PLASTIC ZONE

SUCH MASSIVE RELIGIOUS GATHERINGS OFTEN GENERATE MOUNTAINS OF UNTREATED SOLID WASTES INCLUDING SINGLE-USE PLASTICS, BOTTLES AND WRAPPERS, POLLUTING RIVERS AND CHOKING DRAINAGE SYSTEM

PIYUSH MOHAPATRA & ALKA DUBEY

THIS YEAR, KUMBH Mela, one of the largest religious gathering in the world, will be held at Haridwar this year from April 1st to April 30th. It will witness the coming together of millions of pilgrims, accompanied by sadhus and different akharas, to take a dip in the holy River Ganges. The festival is traditionally credited to the 8th-century Hindu philosopher and saint Adi Shankara, as a part of his efforts to start major Hindu gatherings for philosophical discussions and debates along with Hindu monasteries across the Indian subcontinent. The purna Kumbh mela is being held in every 4 years at one of the four places Prayagraj, Haridwar, Nasik, Ujjain which eventually brings the occasion at same place after 12 years. The Hindu devotees throng in these Kumbh mela with a belief that a dip in water will wash away their sins.

With each passing of the years, the dynamics of Kumbh mela has also changed. The changing socio-economic paradigm of the country also well reflected in Kumbh. During this time many developments take place such as highways, roads, ghats etc. gets constructed for the easy passage. This led to huge gathering of devotees from across the country as well as from the different parts of the world. However, the entire religious and

holy affair there is some negative side too of this mass gathering. Besides mountain of untreated solid waste, pile of single use plastics, polluted river due to various religious activities, choking of drainage systems from plastic bottles and wrappers are common scene in such massive gathering. According to the report Kumbh mela of 2019 generated 2000 tonnes of untreated solid waste in Prayagraj and plastic is the major contributor of the solid waste.

As per an estimate, the 2019 Kumbh Mela at Prayagraj generated 2000 tonnes of untreated solid waste.

ENDOCRINE DISRUPTING CHEMICALS IN PLASTIC

Plastics are made up of synthetic organic chemicals which can easily leach out and negatively impact the environment and human health. Plastic products, particularly single-use plastics such as polybags, sachets and straws, don't fully degrade and remain in the environment for hundreds of years. As these are non-biodegradable and only break down little by little into microplastics and reaches to different environmental matrices hence adversely impacting all form of life. During the production of plastic many potentially harmful chemicals are used either as building monomers, additives, surfactants, and/or solvents. These chemicals may interrupt with the endocrine system of the body that can impact the developmental process of the human being and are hence known as endocrine disrupting chemicals (EDCs).

EDCs are group of chemicals that mimic, block, or interfere with hormones action by altering the endocrine system thus adversely impacting human being and other fauna. Such chemicals are emerging as serious environmental pollutants and threats to public health globally. EDCs are associated with deleterious effects on male and female reproductive health; cause diabetes, obesity, metabolic disorders, thyroid homeostasis and increase the risk of hormone-sensitive cancers. There are large number of research papers which address various aspects of endocrine disrupting chemicals (EDCs), including environmental occurrence, ecological effects and consequences of human exposure. After carefully analyzing the scientific research conducted across

Pollution

the globe, the International Program on Chemical Safety (IPCS), a joint program of WHO, UNEP and International Labor Organization, constructed the definition of EDC: “Endocrine disruptor as an exogenous substance or mixture that can alter the functions of the endocrine system and consequently causes adverse health effects in an intact organism or its progeny or population”.

Most of the EDCs are lipophilic and accumulate in the adipose tissue, thus they have a very long half-life in the body.

are continuously exposed to plasticizers such as BPA on a daily basis that causes a great deal of concern especially profes-

are highly regulated; if disrupted by EDCs, reproductive dysfunctions can occur including reduced fertility, preg-

Plastics are made up of synthetic organic chemicals which can easily leach out and negatively impact the environment and human health.

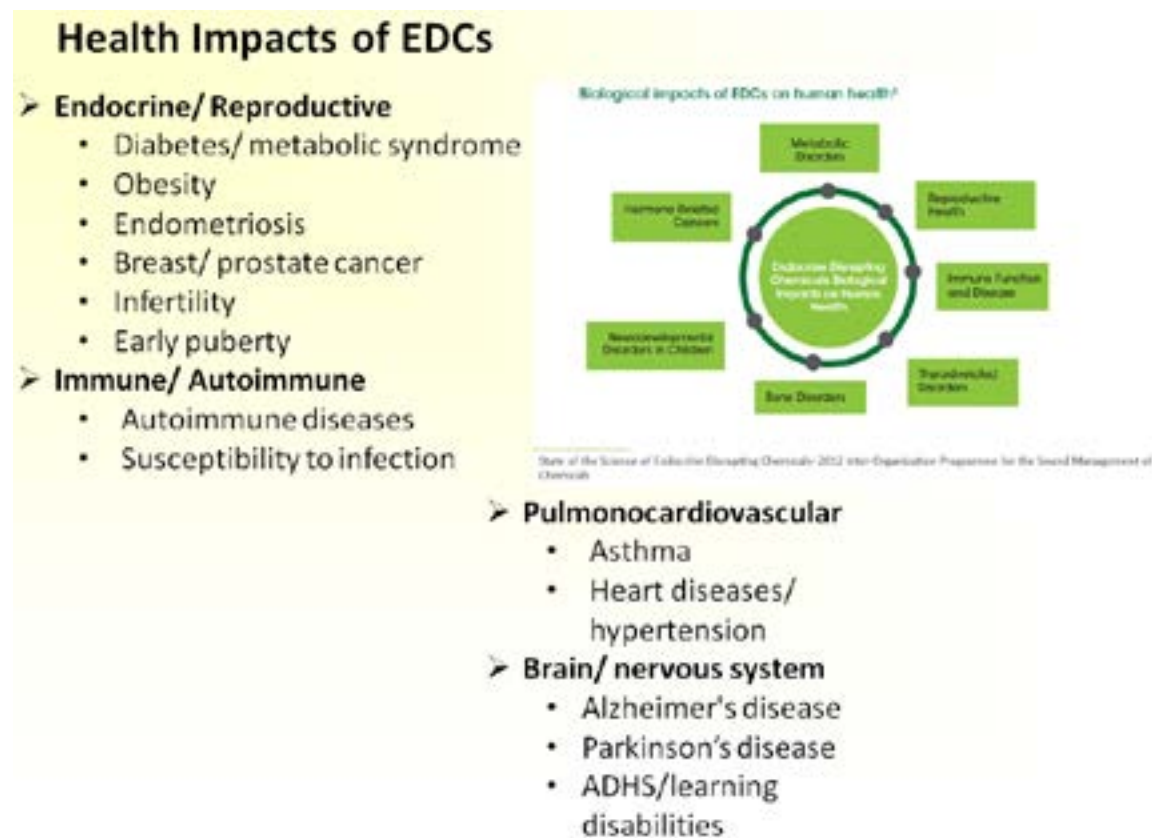
sional workers who are involved in production and usages of pesticides, fungicides, paints and chemicals.

nancy loss, and infertility.

Bisphenol A (BPA), which is used in polycarbonate plastics. It is present in a wide range of applications including baby bottles and linings for metal-based food and beverage cans, ophthalmic lenses, medical equipment, thermal papers, plastic food containers, toys, lacquers, dental sealants, personal care products, and in many other applications. According to regulatory agencies around the world, most people are exposed to BPA through food contact materials by consuming food and beverages into which BPA has leached from the container. BPA and its metabolites have been found in urine, blood, saliva, umbilical cord, placenta and amniotic fluid.

Further, a wide range of other plastic additives, including phthalates, flame retardants, heavy metals are also known EDCs.

Phthalates are used as plasticizers and are added to plastics to increase their



It is difficult to assess the full impact of human exposure to EDCs because adverse effects develop latently and become visible at later ages, and in some people do not present. Developing fetus and neonates are the most vulnerable to endocrine disruption although EDCs may exert adverse effects on human health in other phases of the life cycle as well.

However, there are class of EDCs which are used as plasticizers and are not lipophilic and thus do not bioaccumulate in the body. They are usually cleared from the organism in less than 24 h. Since, we

In the case of EDCs in plastics, bisphe-

nols and phthalates are best studied for mimicking or interfering with processes

regulated by estrogens and androgens such as reproduction. These hormones

Since plastic products are non-biodegradable, they remain in the environment for hundreds of years and break down little by little into microplastics, adversely affecting different environmental matrices and impacting all forms of life.

flexibility, transparency, durability, pliability and elasticity. phthalates are present

in commonly used items such as flooring, roofing, carpeting, shower curtains, packaging equipment, food and beverage packaging, automotive parts, and even in children's toys. Though many congeners of phthalates are banned or restricted in several consumer products but still they are replaced with similarly toxic alternatives.

insulation, and other building materials.

Per- and polyfluoroalkyl substances (PFAS) have been in a wide variety of consumer products including water and stain resistant clothing, fast food wrappers, lubricants, carpet treatments, paints, cookware and firefighting foams and food-contact papers such as pizza

computers.

There are several other EDCs which are used in plastic products and scientific studies are there to establish their harmful impacts. Data are also emerging on economic costs of EDC. A study showed that health effect from EDCs exposure cost 340billion\$ annually to US and from EUR 46 billion to EUR 288 billion per year to EU.

The changing socio-economic paradigm of the country also got well reflected in Kumbh.

Brominated flame retardants (BFRs) are additives used in plastics and other polymer products to reduce flammability and to prevent the spread of fire. The BFRs are added to foam, polystyrene, ABS (Acrylonitrile butadiene styrene) and epoxy resins, which then are used to manufacture electrical and electronic equipment (including computers and televisions), textiles, furniture foam, foam

boxes, microwave popcorn bags, baking papers, and other paper wraps.

Heavy metals such as lead and cadmium can be found in diverse plastic products including plastic shoes and bathroom products, floor mats, plastic and electronic toys, soft PVC packaging for toys, car seats and casings for consumer electronics like televisions and personal

PLASTIC FREE KUMBH

Our Honorable Prime Minister Narendra Modi ji has been putting utmost focus to protect the environment and announced to phase out the single use of plastic in time bound manner. Therefore, occasion like Kumbh is a good occasion to showcase India's commitment towards this direction. So, efforts need to be made to have a successful kumbh without plastic which will lead to have a feel-good factor and maintain sanctity of this occasion .



TRIPURA

BUILDING ROAD FROM WASTES

THIS NOVEL INITIATIVE WOULD NOT ONLY MAKE OUR ENVIRONMENT POLLUTION-FREE BUT ALSO SET AN EXAMPLE TO USE WASTES AS RESOURCES FOR PUBLIC WELFARE PROJECTS

LOVELY KUMARI

THE WASTE WAS collected, recycled and mixed with bitumens for constructing a 680-metre-long road in front of the women's college near Bk Road in Agartala. At the inauguration of the first such road, Tripura Chief Minister Biplab Kumar Deb said, "This is a first-of-its-kind initiative in Tripura which would set an example how we can make our environment plastic-free and use plastic waste for public welfare projects.

District Magistrate of West Tripura district, Shailesh Kumar Yadav, said, "It was just an attempt to experiment and construct more such plastic roads successfully."

Internationally acclaimed scientists and environmentalists are still worried about unmanageable plastic pollution. District Magistrate Yadav said, "Especially in rainy season, this experiment will help us to find the impact of the use of plastic wastes in road building, where water logging is common."

Plastic wastes were collected, recycled and mixed with bitumens for constructing a 80-metre-long road in Agartala, which was inaugurated by Tripura Chief Minister Biplab Kumar Deb. who said, "This is a first-of-its-kind initiative which would set an example to show to the world how to make our environment plastic-free."

Moreover, the Agartala Municipal Corporation generates almost 19 tonnes of plastic wastes daily, which can help us in managing plastic wastes.



सोलर ऊर्जा

देश का पहला गांव, जहां हर घर में सोलर इंडक्शन पर पकता है खाना

बाचा गांव ने जल संरक्षण के बाद सोलर ऊर्जा के उपयोग में रचा इतिहास

लोकेन्द्र सिंह

मध्यप्रदेश के बैतूल जिले का एक छोटा-सा अनुसूचित जनजाति (शेड्यूल ट्राइब) बाहुल्य गांव है- बाचा। आजकल यह छोटा-सा गांव अपने बड़े नवाचारों के कारण चर्चा में बना हुआ है। वर्ष 2016-17 से बाचा ने बदलाव की करवट लेनी शुरू की। आज बाचा न केवल मध्यप्रदेश बल्कि भारत के सभी गांवों के लिए प्रेरणा स्रोत बन सकता है। गांववासियों की लगन, समर्पण, सूझबूझ और वैज्ञानिक समझ ने बाचा गांव की तस्वीर में रंग भर दिए हैं। एक समय में पानी की समस्या का सामना करने वाले इस गांव में अब पानी के पर्याप्त प्रबंध हैं। शैक्षणिक संस्था विद्या भारती से जुड़े समाजसेवी मोहन नागर की प्रेरणा से ग्रामवासियों ने परंपरागत ग्राम-विज्ञान के सहारे बारिश के पानी को एकत्र करना प्रारंभ किया। इसके लिए पहाड़ी या ढलान से आने वाले पानी को रेत की बोरियों की दीवार बनाकर एकत्र किया गया, इससे न केवल खेती और पशुओं के लिए पानी जमा हुआ, बल्कि गांव का भू-जलस्तर (ग्राउंड वाटर लेवल) भी बढ़ गया। गांववालों ने इस प्रयोग को नाम दिया- बोरी बंधान।

बोरी बंधान के इस प्रयोग से संग्रहित बारिश के पानी का उपयोग फसलों की सिंचाई में किया जाता है। पशुओं के पेयजल के लिए भी यह पानी उपयोग होता है। एक छोटे से ग्रामीण विज्ञान के प्रयोग से आज बाचा गांव वह खेत लहलहाते हैं, जो कभी सिंचाई के अभाव में सूखे रह जाते थे। बोरी बंधान से गांव की लगभग 15 एकड़ जमीन सिंचित की जा रही है। इसके साथ ही समाजसेवी मोहन नागर की योजना

मध्यप्रदेश के बैतूल जिले के एक छोटे से अनुसूचित जनजाति गांव “बाचा” की कहानी सबको प्रेरणा देने वाली है। आधुनिक और पारंपरिक विज्ञान के छोटे-छोटे उपायों को अपनाकर, “बाचा” जैसा कोई भी गांव एक आदर्श गांव के रूप में खड़ा हो सकता है।

- मनोज पटेल, निर्देशक-संपादक



से प्रारंभ हुए गंगाअवतरण अभियान के अंतर्गत सभी ग्रामीणों ने आस-पास की पहाड़ियों पर खंती खोद कर बारिश के जल को जमीन के भीतर भेजने का और पौधरोपण करने का अनुपम एवं अनुकरणीय कार्य आरम्भ किया है। पिछले कुछ वर्षों से यह कार्य लगातार जारी है। प्रकृति संवर्धन और जल संरक्षण

का यह अभिनव कार्य उस समय भी नहीं रुका जब कोरोना के कारण समूचा देश स्थिर-सा हो गया है। चूंकि गांव में घरवास (लॉकडाउन) से छूट थी, कोरोना के संक्रमण की दस्तक भी नहीं हुयी थी, इसलिए बाचा और उसके आसपास के ग्रामीणों ने बारिश के जल को संरक्षित करने के लिए मानसून के आने से पहले ही गंगा अवतरण अभियान को प्रारम्भ कर दिया।

सौर ऊर्जा के प्रयोग के लिए देशभर में चर्चित

बाचा गांव ने न केवल स्वच्छता और जलसंरक्षण सहित अन्य महत्व अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, बल्कि प्राकृतिक ऊर्जा का दैनिक जीवन में उपयोग करने के लिए वैज्ञानिक पहल भी प्रारंभ की है। आज बाचा की पहचान देश में ऐसे पहले गांव के रूप में है, जहाँ हर घर की रसोई में सौर ऊर्जा की सहायता से भोजन तैयार किया जाता है। समाजसेवी मोहन नागर बताते हैं- “जीवाश्म ईंधन से जहाँ पर्यावरण को क्षति पहुँच रही थी, वहीं महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए भी यह ठीक नहीं था। हमने



सबसे पहले गाँववालों को सौर ऊर्जा के बारे में जागरूक किया गया। आईआईटी मुंबई के विद्यार्थियों और ओएनजीसी के अधिकारियों के सहयोग गाँव में इलेक्ट्रिक सोलर इंडक्शन लगाए गए हैं। अब गाँव के प्रत्येक घर में सौर ऊर्जा का उपयोग कर खाना बनाया जाता है। इसके लिए आईआईटी मुंबई के विद्यार्थियों और ओएनजीसी के अधिकारियों ने गाँव के कुछ लोगों को प्रशिक्षित किया और उन्हें सौर ऊर्जा से बिजली कैसे बनाई जाती है, इसकी वैज्ञानिक प्रक्रिया की जानकारी दी।

गाँव वालों के साथ सबसे बड़ी समस्या यह थी कि प्रारंभ में उन्हें न तो सौर ऊर्जा के बारे में पता था और न ही इसके लिए उपयोग में आने वाले उपकरणों की कोई जानकारी थी। इस समस्या का समाधान निकला आईआईटी मुंबई और ओएनजीसी के अधिकारियों से। उन्होंने बाकायदा सौर ऊर्जा के उपयोग और उसके उपकरणों के रखरखाव के लिए गाँव के ही कुछ लोगों को प्रशिक्षित किया। गाँववासियों को समझाया कि सौर ऊर्जा की वैज्ञानिक प्रक्रिया क्या है और उससे कैसे बिजली बनाई जा सकती है। हालाँकि, शुरुआत में तो गाँववालों को यह बेहद ही मुश्किल और खर्चीला काम नज़र आया। लेकिन, पुराने अनुभवों और सफलता ने उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। परिणाम सबके सामने हैं कि आज सौर ऊर्जा ने ग्रामीणों के ईंधन का खर्च तो बचाया ही, महिलाओं को चूल्हे के धुँए से भी बचा लिया है।

अपने रसोईघर में सौर ऊर्जा से खाना बनाने वाली लता बताती है कि सौर पैनल नहीं लगा था तब हमें लकड़ी लाने के लिए जंगल में दूर तक जाना पड़ता था। हमें डर भी लगता था। इसके साथ ही अब हमें रसोई में धुँए से भी छुटकारा मिल गया है। ग्रामीण शरद बताते हैं कि सौर ऊर्जा के उपयोग के बाद से गाँव में बहुत परिवर्तन आया है।

आईआईटी मुंबई के इंजीनियर देवसुख बताते हैं कि बाचा गाँव में 74 घर हैं। इन सभी घरों में एक-एक हजार वॉट के सोलर पैनल सिस्टम लगे हैं। इसमें चार पैनल, चार बैटरी और एक चूल्हा शामिल है। उनका दावा है कि बारिश के मौसम में सूरज की रौशनी नहीं मिलने पर भी बैटरी के बैकअप से 5-6 घंटे तक यह काम करता है।

‘अन्नपूर्णा मंडपम’ से बचा रहे हैं प्रतिमाह 500 से 1000 रुपये

विद्या भारती ने इस गाँव में एक और सार्थक पहल की शुरुआत की है, जिसे “अन्नपूर्णा मंडपम” नाम



दिया गया है। इसका अर्थ है घर का किचन गार्डन। गाँव के लगभग हर घर में यह गार्डन है, जिसमें ग्रामीण घर में उपयोग के लिए सब्जी उगा रहे हैं। इससे हर परिवार के महीने के 500-1000 रुपये की बचत हो जाती है।

प्लास्टिक मुक्त घूरा

इस गाँव की एक और बड़ी उपलब्धि है कि ग्रामीणों ने अपने घूरों (कचरा एकत्र करने के स्थान) को प्लास्टिक मुक्त कर लिया है। प्लास्टिक मुक्त घूरे में एकत्र कचरे का उपयोग खेत के लिए जैविक खाद बनाने में किया जाता है। वैसे तो इस गाँव में प्लास्टिक का उपयोग कम ही किया जाता है, लेकिन जो भी प्लास्टिक कचरा निकलता है, उसे अलग रखा जाता है। उसे घूरे में नहीं फेंका जाता है।

गाँव पर बनी फिल्म को मिला राष्ट्रीय पुरस्कार

मैं जब बाचा गया तो उसकी कहानी ने मुझे प्रेरित किया। तब ही तय किया कि इस गाँव की कहानी और प्रयोगों को बाकी सबके सामने लाना चाहिए। उसके बात मैंने और माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय के प्रोड्यूसर मनोज पटेल ने इस गाँव पर डॉक्यूमेंट्री फिल्म ‘बाचा : द राइजिंग विलेज’ का निर्माण करने का निर्णय लिया। इस फिल्म को राष्ट्रीय ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज संस्थान, हैदराबाद के तत्वावधान में आयोजित ‘नेशनल फिल्म फेस्टिवल ऑन रूरल डेवलपमेंट’ में द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अलावा इस फिल्म को कोलकाता में आयोजित 5वें अंतरराष्ट्रीय विज्ञान फिल्म फेस्टिवल में

विद्या भारती ने इस गाँव में एक और सार्थक पहल की शुरुआत की है, जिसे “अन्नपूर्णा मंडपम” नाम दिया गया है। इसका अर्थ है घर का किचन गार्डन।

स्क्रीनिंग हेतु भी चुना गया।

बाचा की कहानी साधारण कहानी नहीं है। यह पिछड़े गाँव से आदर्श गाँव तक सीमित रह जाने की कहानी भी नहीं है। ‘बाचा’ की यात्रा अभी रुकी नहीं है। आधुनिक और परंपरागत विज्ञान के छोटे उपायों को अपनाकर बाचा ने सफलता की जो नींव रखी है, वह उसे और मजबूत करने के लिए प्रयत्नशील है। यह अन्य गाँव को भी राह दिखा रहा है। निसंदेह यह छोटा गाँव आज सबके बीच न केवल चर्चा का बल्कि प्रेरणा का स्रोत भी बन गया है।

(लेखक माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय में सहायक प्राध्यापक हैं। उन्होंने बाचा गाँव पर फिल्म ‘बाचा : द राइजिंग विलेज’ का निर्माण भी किया है, जिसे राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है।)

समाज

गरीब बच्चों का तन ढक रही है 'कतरन'

तनय अब तक 35000 मीटर कपड़े का सदुपयोग कर चुके हैं

लवली कुमारी

जिस उम्र में बच्चे खेलते-कूदते और पढ़ते हैं, उस उम्र में सामाजिक कार्य के लिए किसी बच्चे में तत्परता की ललक ने सबको चौंका दिया है। उम्र महज 15 साल लेकिन काम, जो बड़े-बड़े न कर पायें। कोलकाता के तनय जैन 10वीं कक्षा के छात्र हैं। तनय ने अपने पिता के कपड़ा कारखाने में वस्त्र निर्माण के बाद बचे वस्त्रों से नये कपड़े बनाने की पहल की है। तनय बचे हुए कपड़े से सुन्दर वस्त्र तैयार गरीब और वंचित वर्ग के बच्चों को निःशुल्क देते हैं। यह कार्य करने के लिए उन्होंने अब एक संस्था भी बना ली है, जिसे 'कतरन' नाम दिया है।

हुगली नदी के तट पर बसा कोलकाता भारत के औद्योगिक उत्पादन का बड़ा बाजार माना जाता है। विशेषकर जब वस्त्र उद्योग की बात आती है तो इसे देश का सबसे बड़ा वाणिज्यिक केन्द्र का दर्जा दिया गया है। यूं तो वस्त्र उद्योग को पर्यावरण की दृष्टि से सबसे ज्यादा प्रदूषणकारी उद्योग माना गया है। एक रिपोर्ट के मुताबिक प्रत्येक वर्ष लोगों द्वारा शौकिया कपड़े खरीदने की आदत की वजह से लगभग 39 मिलियन बेकार कपड़ा एकत्र होता है, जिसका इस्तेमाल या तो गड्ढे की भरपाई में किया जाता है या फिर उनको जला कर नष्ट करना पड़ता है।

प्रत्येक वर्ष लोगों द्वारा शौकिया कपड़े खरीदने की आदत की वजह से लगभग 39 मिलियन बेकार कपड़ा एकत्र होता है, जिसका इस्तेमाल या तो गड्ढे की भरपाई में किया जाता है या फिर उनको जला कर नष्ट करना पड़ता है।

सदुपयोग का विचार आया। उसने अपने परिवार और मित्रों की सहायता से कतरन से सुन्दर वस्त्र तैयार कर जरूरतमंद लोगों को उन्हें उपलब्ध कराना शुरू किया। उसके इस काम की सब ओर सराहना हो रही है। तनय अब तक 35000 मीटर कपड़े का सदुपयोग कर चुका है। उसने अब तक लगभग 2500 नये वस्त्र कोलकाता और दूसरे शहरों के गरीब और पिछड़े बच्चों के बीच बांटे हैं।

तनय की संस्था 'कतरन' ने अपनी स्थापना के एक सप्ताह बाद ही लगभग 68 जरूरतमंद दर्जियों को भी काम उपलब्ध कराया। ये सिर्फ दर्जी नहीं हैं, बल्कि समाजसेवी भी हैं। कतरनों से नये और आकर्षक वस्त्र तैयार करने के साथ ही ये कारीगर उनकी पैकिंग करते हैं तथा उन्हें जरूरतमंद लोगों तक भी पहुंचाते हैं।

अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचने के लिए 'कतरन' की टीम- तनय, उनकी सहपाठी माधोगारिया और राउनक सारावागी ने मिलकर सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म इन्स्टाग्राम पर 'कतरन फाउंडेशन' नाम से अकाउंट भी बनाया है। तनय को इस बात का विश्वास है कि उनकी यह संस्था गरीब बच्चों के चेहरे पर मुस्कान लाने के साथ कपड़े के कचरे से होने वाले प्रदूषण से पर्यावरण को बचाएगी।



पर्यावरण

26 की उम्र में लगाए 40 हजार पौधे

यह कहानी है, उत्तराखंड के नैनीताल जिला के ओखलकांडा ब्लॉक के नाई गांव में रहने वाले चंदन सिंह नयाल की

कविता मिश्रा

जि स उम्र में लोग जीवन में ऊंचाई हासिल करने के लिए महानगरों का रुख कर लेते हैं, उस उम्र में एक युवा अपने गाँव लौट आता है और पर्यावरण की रक्षा के लिए पौधरोपण शुरू करता है। वह महज 26 साल की उम्र में 40 हजार से अधिक पौधे लगाकर पर्यावरण संरक्षण की लम्बी लकीर खींच देता है।

यह कहानी है, उत्तराखंड के नैनीताल जिला के ओखलकांडा ब्लॉक के नाई गाँव में रहने वाले चंदन सिंह नयाल की। चंदन की उम्र कम है, लेकिन इरादे बहुत ऊँचे हैं। चंदन ने जब देखा कि चीड़ और बुरांश के जंगलों में आग लग रही है, जमीन सूख रही है तो उन्होंने अपनी लगन से चामा तोक इलाके में बांज का जंगल तैयार कर दिया।



ने औषधीय पौधों का संरक्षण शुरू किया। इसके साथ ही रिंगाल, भीमल जैसे पौधे खास तौर पर लगाए। रिंगाल से जहाँ टोकरियां बनती हैं, वहीं भीमल के रेशे से चप्पल आदि बनाई जा सकती हैं।

चंदन के पौधों के अलावा फलदार वृक्ष के पौधे जैसे कि आड़ू, प्लम, सेब, अखरोट, माल्टे और नींबू इत्यादि का वितरण करते हैं। इसके लिए उन्होंने अपनी नर्सरी भी तैयार की है। उनसे मिलने जो भी आता है, वह भेंट के तौर पर पौधा पाता है।

चंदन पर्यावरण को लेकर कितने जागरूक हैं, इस बात का अंदाज़ा इससे लगाया जा सकता है कि उनकी मौत के बाद किसी पेड़ को ना काटना पड़े इसलिए उन्होंने हल्द्वानी मेडिकल कॉलेज को अपना देहदान कर दिया है। चंदन सिंह नयाल की ये कहानी बहुत प्रेरणादायक है। चंदन के कार्यों से

पहाड़ों पर औषधीय पौधे रोजगार का एक बेहतर जरिया साबित हो सकते हैं। इस बात को सोचकर चंदन ने औषधीय पौधों का संरक्षण शुरू किया।

बांज एक ऐसा पेड़ है जो भूस्खलन रोकने में मददगार साबित होता है। यह जल संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पेड़ जमीन में नमी बचाए रखता है। इसके साथ ही बांज के वृक्ष औषधीय पौधों का भी संरक्षण करते हैं।

पहाड़ों पर औषधीय पौधे रोजगार का एक बेहतर जरिया साबित हो सकते हैं। इस बात को सोचकर चंदन



चंदन के पौधों के अलावा फलदार वृक्ष के पौधे जैसे कि आड़ू, प्लम, सेब, अखरोट, माल्टे और नींबू इत्यादि का वितरण करते हैं।

प्रेरणा लेकर सभी लोगों को इस तरह के प्रयास करने चाहिए, जिनसे हम सब अपने भविष्य को सुरक्षित बना सकें।

जंगल

बगिया वाले बाबा

सूखे जालौन में फिर से खड़ा कर दिया घने जंगल का जाल

राहुल कुमार गौरव

बिहार के दशरथ मांझी ने मोहब्बत के वास्ते पहाड़ काट कर रास्ता बनाया था। जब मांझी ने पहाड़ को तोड़ना शुरू किया था, तो उन्हें लोग पागल बोलते थे। ये कहानी भी दशरथ मांझी की तरह एक पागल की है, जिसने गांव से मोहब्बत की खातिर नौकरी छोड़ दी और बंजर गांव को हरा-भरा कर दिया।

उत्तर प्रदेश का एक शहर है- जालौन, जो एक मराठा राज्यपाल का पूर्व मुख्यालय था। इस क्षेत्र के बारे में कहा जाता है कि जालौन क्षेत्र जंगलों का घना जाल था क्योंकि हिंदी जंगलों में 'वान्ड नेट' का अर्थ 'जल' होता है। इसलिए जालौन को इसका नाम जालावान मिल गया। इसी जालौन के मीगनी गांव में रहने वाले हैं, माता प्रसाद तिवारी। 61 साल के माता प्रसाद को प्यार से लोग बगिया वाले बाबा के नाम से ही बुलाते हैं।

माता प्रसाद तिवारी से बगिया वाले बाबा बनने का संघर्ष इतना आसान नहीं था। साल 1989 में उनके गांव में सूखा पड़ा। जंगलों के घने जाल वाले जालौन में वृक्ष खत्म होने लगे। अपने गांव को बंजर में परिवर्तित होते देख माता प्रसाद को चिंता होने लगी। उन्होंने न केवल अपने गांव को, बल्कि पूरे जालौन जिले को फिर से 'हरा-भरा जालौन' बनाने का सपना देखा। अपने इस सपने को पूरा करने के लिए उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और गांव लौट आये। अपने इस निर्णय के लिए शुरूआती दौर में लोग उन्हें पागल बोलते थे और उनके काम का मजाक उड़ाते थे। तिवारी जी भली-भाँति जानते थे कि अगर रिश्ते निभाने



हैं तो मुलाकातें जरूरी हैं, लगाकर भूल जाने से तो पौधे भी सूख जाते हैं। 1990 से 2003 तक उन्होंने हजारों पौधे लगाए।

'डाउन टू अर्थ' की रिपोर्ट की मानें तो माता प्रसाद ने आम, अमरूद,

तिवारी जी ने पूरे जिले में करीब 250 बगिया तैयार कराई हैं। हर बगिया में करीब 2000 पेड़ हैं। माता प्रसाद तिवारी अब तक करीब 3.50 लाख पौधे लगा चुके हैं।



चित्र साभार : डाउन टू अर्थ

कटहल से लेकर नीम, पीपल और बरगद के पेड़ लगाए हैं। तिवारी जी ने पूरे जिले में करीब 250 बगिया तैयार कराई हैं। हर बगिया में करीब 2000 पेड़ हैं। माता प्रसाद तिवारी अब तक करीब 3.50 लाख पौधे लगा चुके हैं। इसमें 3 लाख पेड़ हो गए हैं।

5 हेक्टेयर के इस क्षेत्र में गर्मी में भी सुकून मिलता है। प्रति वर्ष उनकी बगिया से 2 लाख के फल बिकते हैं, इससे प्राप्त रुपये मजदूरों का मानदेय देने और सामाजिक कार्यों में खर्च किये जाते हैं। बगिया वाले बाबा अपने लिए कुछ नहीं बचाते हैं।

हरित घर

‘हर घर की छत पर हो टैरेस गार्डन’

पूर्णिमा का सपना, हर घर की छत पर हो एक छोटा सा खेत

कविता मिश्रा

पिछले कुछ समय में हमारे देश में किसान और खेती को लेकर लोगों की धारणा काफी बदली है। आज बहुत से लोग कॉर्पोरेट नौकरी छोड़कर खेती से जुड़ रहे हैं। ऐसे लोग खेती में नए मुक़ाम हासिल कर रहे हैं और दूसरे किसानों के लिए प्रेरणा भी बन रहे हैं। ऐसी ही कुछ कहानी है, गुरुग्राम की 54 वर्षीय पूर्णिमा सावरगांवकर की। वह हमेशा से ही एक उत्साही प्रकृति प्रेमी, अर्बन गार्डनर और सस्टेनेबल लाइफस्टाइल में भरोसा रखने वाली रहीं हैं।

आज वह ‘Enriched Soil and Soul’ चला रहीं हैं, जिसके ज़रिए वह 7 तरह के पॉटिंग मिक्स की बिक्री कर रही हैं। इन पॉटिंग मिक्स को वह पराली और अन्य जैविक कचरा मिलाकर बनाती हैं। साथ ही, वह अपने 300 वर्गफीट टैरेस गार्डन में 70 तरह के फल-फूल और सब्जियां उगा रहीं हैं। उनके बगीचे में स्ट्रॉबेरी, अनार, जामुन और पपीते के साथ मूली, गाजर, टमाटर और शिमला मिर्च जैसी सब्जियां शामिल हैं। इसमें तुलसी, अजवायन और मोरिंगा जैसी जड़ी-बूटियां भी हैं।

लॉकडाउन के दौरान, उन्होंने अपना यूट्यूब चैनल शुरू किया ताकि वह अपने टैरेस गार्डन के साथ-साथ दूसरों को प्रेरित करें और उनकी मदद करें। वह गार्डनिंग पर लाइव सेशन करती हैं और हिंदी में भी समझाती हैं ताकि ज्यादा से ज्यादा लोगों तक उनकी बात पहुंचे। मिट्टी को अधिक उपजाऊ बनाने के

वह अपने 300 वर्गफीट टैरेस गार्डन में 70 तरह के फल-फूल और सब्जियां उगा रहीं हैं। उनके बगीचे में स्ट्रॉबेरी, अनार, जामुन और पपीते के साथ मूली, गाजर, टमाटर और शिमला मिर्च जैसी सब्जियां शामिल हैं।

लिए और पर्यावरण के भार को कम करने के लिए, उन्होंने अमृत मिट्टी बनाने के लिए पराली मिलाने का फैसला किया। इसके लिए, पूर्णिमा गुरुग्राम के बाहरी इलाके में स्थित बेहाल्पा नामक गाँव में एक किसान परिवार से पराली, बागवानी अपशिष्ट (सूखे पत्ते) और गाय के गोबर और गौमूत्र लेती हैं। उनका लक्ष्य है कि भारत के हर घर में अपना खाना उगाने के लिए टैरेस गार्डन हो, चाहे वह छोटे से छोटा ही क्यों न हो। आज उनके चैनल के 23 हजार से ज्यादा सब्सक्राइबर हैं और कुछ वीडियो को एक लाख से अधिक बार देखा गया है।

लॉकडाउन के दौरान, उन्होंने अपना यूट्यूब चैनल शुरू किया ताकि वह अपने टैरेस गार्डन के साथ-साथ दूसरों को प्रेरित करें और उनकी मदद करें।



प्राकृतिक संसाधन

नागरिकों का मौलिक अधिकार है 'स्वच्छ जल'

मैली नदियां अपने अस्तित्व को बचाने को कराह रही हैं

सुरभि तोमर

जल- जीवन, समाज और अर्थव्यवस्था का आधार है। जल- ऊर्जा का अनन्य स्रोत है। ऊर्जा के बिना शरीर जीवित नहीं रह सकता। नमी न हो तो प्राणवायु भी प्राणदायी न होकर, मारक हो जाए। विश्व में कोई वस्तु ऐसी नहीं है जिसका उत्पादन जल के बिना संभव हो। इसलिए जल को मानव सभ्यता के साथ संसार के समस्त जीवधारियों का प्राणाधार कहा जाता है। किंतु जल सीमित मात्रा में उपलब्ध है। जल के महत्व को देखते हुए भारतीय संस्कृति में जल संरक्षण-संवर्धन गतिविधियों को परंपरा का रूप दिया गया। हमारी संस्कृति में जल को उपभोग की वस्तु ना मान कर सांस्कृतिक तत्व के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। वर्तमान समय में हमारे समाज में जीवन मूल्यों की नींव कमजोर हो गई है। हमने प्रकृति प्रदत्त अमूल्य उपहारों का हरण तथा हनन करना शुरू कर दिया, जिससे जल संकट गहराता चला गया है। मैली नदियाँ अपने अस्तित्व को बचाने को कराह रही हैं।

जिस देश में प्रकृति के विभिन्न अंगों, वृक्षों एवं नदियों की पूजा की परंपरा हो, पशु-पक्षियों की सेवा को पुण्य माना जाता हो, वहां प्रकृति के विरुद्ध कार्य होना आश्चर्यचकित करता है। विकास के नाम पर मानव ने प्रकृति के नियमों से छेड़छाड़ की और प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया। इस तरह उसने स्वयं ही अपने लिए आपदा को निमंत्रण दिया। औद्योगिकीकरण में जल, जंगल, आसमान सभी के साथ

और उससे लोगों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों पर चिंता जताते हुए कहा कि स्वच्छ पर्यावरण और प्रदूषण रहित स्वच्छ जल व्यक्ति का मौलिक अधिकार हैं और इसे सुनिश्चित करना सरकार का संवैधानिक दायित्व है। संविधान का अनुच्छेद-21 जीवन का अधिकार देता है और इसमें गरिमा के साथ जीवन जीने और शुद्ध पेयजल का अधिकार शामिल है। न्यायालय ने यह भी कहा कि अनुच्छेद-47 और अनुच्छेद-18 में जन स्वास्थ्य ठीक करना राज्यों का दायित्व है। साथ ही प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह प्रकृति जैसे वन, नदी, झील और जंगली जीव-जंतुओं का संरक्षण और रक्षा करें।

आम लोगों और नागरिक संगठनों, सभी को यह समझना आवश्यक है कि भले ही प्रत्येक नागरिक को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराना सरकार

संविधान का अनुच्छेद-21 जीवन का अधिकार देता है और इसमें गरिमा के साथ जीवन जीने और शुद्ध पेयजल का अधिकार शामिल है।

खिलवाड़ किया गया। जीवन अमृत प्रदान करने वाली नदी, तालाब, झील सभी प्रदूषक तत्वों के कारण जहरीले हो गए। आज जीवन प्राणदाता जल का संकट विश्व के समक्ष चुनौती बन गया है। भारत में भी जल संकट गहराता जा रहा है। जल संकट मुख्य रूप से दो तरह का है। एक, भूजल का गिरता स्तर। देश में पानी की उपलब्धता 1400 घनमीटर प्रतिवर्ष से भी कम हो गई है, जो वैश्विक जल समस्या के नजदीक पहुँच गई है। देश के 256 जिलों के 1592 विकास खंडों में भूगर्भ जल का स्तर निरंतर गिरता जा रहा है, जिसका कारण भूजल का अंधाधुंध दोहन और उसका पुनर्भरण न होना है। रिपोर्ट बताती है कि पंजाब में प्रत्येक वर्ष भूजल का स्तर एक मीटर नीचे चला जाता है।

दूसरी समस्या है, जल का प्रदूषित होना। कुछ दिन पहले ही उच्चतम न्यायालय ने नदियों में प्रदूषण



की जिम्मेदारी है। लेकिन यह दायित्व बहुत बड़ा है, जिसे केवल सरकार पर आश्रित रह कर पूरी तरह नहीं निभाया जा सकता। प्रत्येक नागरिक की इसमें सक्रिय सहभागिता आवश्यक है। हम सब केवल अधिकारों की बात करते हैं, बात जब दायित्व की आती है तो मुँह चुराने लगते हैं। यदि रास्ते में कहीं पानी या पर्यावरण की बर्बादी होते दिख जाए तो हम में से शायद ही कोई उसे रोकने के प्रति सक्रियता दिखाएगा। जब 'शायद ही कोई' की जगह 'शायद सभी' आने लगे तो हम शुद्ध पानी और पर्यावरण के अपने और अन्य सभी के मौलिक अधिकारों की पूर्ति सुनिश्चित कर सकेंगे।

सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आखिर स्वच्छ पेयजल क्यों नहीं मिल पा रहा है? इसके कारणों की तलाश करना सरल है, लेकिन उन कारणों का समाधान करना मुश्किल है।

अनमोल प्राकृतिक संसाधनों का हमें कोई मोल नहीं चुकाना पड़ता। इसलिए इनकी महत्ता से भी हम अनजान हैं और लापरवाह भी। हम इन का अपव्यय करते हैं, इन्हें प्रदूषित करते हैं। पर्यावरण को क्षति पहुंचाना मानों हमारा स्वभाव बन चुका है। कई वर्षों से मानव जल की गुणवत्ता की लड़ाई लड़ रहा है। चौथी और पांचवीं सदी के दौरान मॉडर्न मेडिसिन का जनक कहे जाने वाले हिप्पोक्रेट्स ने पता लगाया कि अशुद्ध जल से ही बीमारियाँ होती हैं। तब उन्होंने विश्व के सबसे पुराने वाटर फिल्टर में से एक को विकसित किया था। दूषित जल ने जैव विविधता के साथ मानव के कई समुदायों के सामने अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है।

सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि आखिर स्वच्छ पेयजल क्यों नहीं मिल पा रहा है? इसके कारणों की तलाश

करना सरल है लेकिन उन कारणों का समाधान करना मुश्किल है। पानी का प्रदूषण प्राकृतिक और मानव निर्मित दोनों प्रकार का है। वर्तमान में मानव निर्मित प्रदूषण ही देश के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है। विश्व बैंक के सर्वेक्षण के अनुसार भारत में पेयजल के रूप में 85 प्रतिशत भूजल का उपयोग होता है। यदि भूजल ही प्रदूषित हो जाए तो स्वच्छ जल कैसे मिलेगा? इसलिए हमारा चिंतन इस विषय पर होना चाहिए कि भूजल के प्रदूषण के कारण क्या हैं और उनका समाधान क्या है? वर्तमान में भूजल के प्रदूषित होने का सबसे बड़ा कारण नदियों का प्रदूषित होना है। पानी की उपलब्धता के लिए हमारी प्राचीन सभ्यताएं नदियों के किनारे बसती रही हैं। ये जीवनदायिनी नदियां ही हमारे पर्यावरण को भी जीवंत बनाती रही हैं। नदियां जल की जैव विविधता के साथ अपने किनारे पर्यावरण को भी पोषित और पुष्पित करती आ रही हैं। लेकिन आज ये जलधाराएं मृतप्राय हो गई हैं। गंगा, यमुना जैसी बड़ी और सदानीरा नदियां, जिनमें वर्ष भर पानी रहता है, उनमें प्रदूषण का प्रभाव कम नजर आता है। लेकिन बरसाती नदियां जैसे हिंडन, काली और कृष्णा इत्यादि नदियों का पानी या तो सूख चुका है या कुछ दूरी तक ही अपनी यात्रा पूरी कर पाता है। ऐसी नदियों का पानी उनके मैदानी क्षेत्रों में पूरी तरह प्रदूषित हो चुका है। छोटी नदियों में औद्योगिक क्षेत्र का बिना शोधित किया हुआ तरल कचरा गिरने तथा शहर और कस्बों के घरेलू नालों के नदी में गिरने के कारण, ये नदियां प्रदूषित नालों में परिवर्तित हो चुकी हैं। प्रतिदिन लगभग 4 करोड़ लीटर दूषित जल नदियों और स्वच्छ जल के अन्य स्रोतों में गिरता है। इन नदियों में बहने वाला प्रदूषण और हानिकारक विषैले तत्व धीरे-धीरे भूजल तक भी जा पहुंचे हैं। विभिन्न अध्ययन से यह बात सिद्ध हो चुकी



है कि छोटी नदियों के जल में जो रासायनिक तत्व पाए गए हैं, उन नदियों के मैदानी क्षेत्रों के भूजल में भी वही हानिकारक रासायनिक तत्व मिले हैं। भारत के अधिकांश भागों में छोटी बरसाती नदियों के प्रदूषित होने से देश के एक बहुत बड़े भाग का भूजल भी पूरी तरह प्रदूषित हो चुका है। इस समस्या का एकमात्र और स्थायी समाधान यही है कि इन नदियों को प्रदूषण मुक्त किया जाए और पुनर्जीवित किया जाए।

जल, वायु, मिट्टी और भूतल जल के प्रदूषित होने का दुष्प्रभाव लोगों के स्वास्थ्य पर तो पड़ ही रहा है यह अर्थव्यवस्था पर भी अपना दुष्प्रभाव डाल रहा है। लासेंट पत्रिका में अभी ताजा रिपोर्ट के अनुसार, असमय हुई मृत्यु और बीमारियों के कारण 2019 में भारत को 2.6 लाख करोड़ रुपयों की आर्थिक हानि हुई, जो सकल घरेलू उत्पादन (जीडीपी) का 1.4% है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार ऊपर से आने वाले प्रदूषित जल से निचले क्षेत्रों का आर्थिक विकास प्रभावित होता है और उसकी गति धीमी पड़ जाती है। इन क्षेत्रों की सकल घरेलू उत्पादन वृद्धि में लगभग एक तिहाई की गिरावट आ जाती है। भारत एक विकासशील देश है। इसलिए भारत में इसका प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है जिससे जीडीपी को लगभग 50% का नुकसान पहुंचता है। एक अन्य अध्ययन के अनुसार नदी के बहाव के निचले क्षेत्रों में प्रदूषित जल के कारण कृषि की आय में 9% की गिरावट देखी गई है। कृषि पैदावार भी 16 प्रतिशत तक घट जाती है।

माना कि प्रदूषण मुक्त स्वच्छ पेयजल देश के नागरिकों का मौलिक अधिकार है और सरकार इसे सुनिश्चित करने के लिए बाध्य हैं लेकिन यह बिल्कुल भी न्याय संगत नहीं है कि जल को दूषित करने का कार्य हम सब करें और उसको सुधारने का कार्य सरकार के जिम्मे छोड़ दें। बेशक हम सब की सरकार से अपेक्षा रहती है कि वह नागरिकों की समस्याओं को दूर करे, उन्हें गरिमापूर्ण जीवन जीने के लिए साधन उपलब्ध कराए लेकिन सरकार के सामने भी चुनौतियां कम नहीं हैं। हमें स्वयं भी आत्ममंथन करना होगा कि क्या हम अपना दायित्व निभा रहे हैं, हम समस्या का हिस्सा बन रहे हैं या समाधान का? हमें कचरा फैलाने और प्रकृति के दोहन करने की अपनी आदत को बदलना होगा। यदि हम अपने प्राकृतिक संसाधनों को स्वस्थ एवं स्वच्छ रखेंगे तो इस कार्य में खर्च होने वाले धन, श्रम और अन्य संसाधनों को सरकार किन्हीं अन्य विकास कार्यों में लगा सकती है। इसलिए हमें व्यक्तिगत स्तर पर भी सभी जल स्रोतों

को संरक्षित और पुनर्जीवित करते रहने का प्रयास करते रहना होगा। ऐसा नहीं है कि समाज के सभी लोग जलस्रोत स्वच्छ रखने के प्रति उदासीन है। समाज में अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे, जहाँ लोग बड़ी लगन से प्राकृतिक संसाधनों को सहेजने का प्रयास कर रहे हैं और इस उद्देश्य को पूरा करने में दिन रात एक किए हुए हैं। समाज के अन्य लोगों को भी इनका अनुकरण करना चाहिए।



पर्यावरण PERSPECTIVE



Contact Us At:

9449802157

sanrakshanparyavaran@gmail.com

Don't forget to visit

WWW.PARYAVARANPERSPECTIVE.COM